अप्रैल-जून
April-June

वर्ष 30
अंक : 119

2024

ISSN : 0976-0024

महिला Mahila
विधि भारती Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

ISSN 0976-0024
9 770976 002001

PEER REVIEWED REFEREED JOURNAL

प्रधान संपादक
सन्तोष खन्ना
संपादक
डॉ. उषा देव

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

Indexed at Indian Documentation Service, Gurugram, India
Citation No. MVB-30/2024

विधि भारती परिषद्
बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)
मोबाइल : 09899651872, 09899651272
E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com, santoshkhanna25@gmail.com
Website : www.vidhibharatiparishad.in

PEER REVIEWED REFEREED JOURNAL

'महिला विधि भारती' पत्रिका (पूर्व यू.जी.सी. की सूची में भी शामिल, क्र. 156, पत्रिका संख्या 48462)

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेज़ी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

Website : www.vidhibharatiparishad.in

वर्ष 30, अंक : 119, (अप्रैल-जून, 2024)

प्रधान संपादक : सन्तोष खन्ना

संपादक : डॉ. उषा देव

बोर्ड ऑफ रेफरीज़ एवं परामर्श मंडल

1. डॉ. के.पी.एस. महलवार : चेयर प्रो., प्रोफेशनल एथिक्स, नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, न.दि.
2. डॉ. चंदन बाला : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, जयनारायण व्यास वि.वि., जोधपुर
3. डॉ. राकेश कुमार सिंह : पूर्व डीन एवं विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, लखनऊ विश्वविद्यालय
4. डॉ. किरण गुप्ता : पूर्व विभागाध्यक्ष, फैकल्टी ऑफ लॉ, दिल्ली विश्वविद्यालय
5. प्रो. देवदत्त शर्मा : डीएवी (पीजी) कॉलेज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश
6. डॉ. सुरेंद्र यादव : निदेशक, स्केल विधि महाविद्यालय, अलवर, राजस्थान
7. डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल : आई.ए.एस. (से.नि.) एवं विधि विशेषज्ञ

परिषद् की कार्यकारिणी, संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. रेनू (कोषाध्यक्ष)
5. श्री अनिल गोयल (सचिव, प्रचार)
6. डॉ. प्रेमलता (सदस्य)
7. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
10. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
11. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
12. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
13. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
14. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

शुल्क दर

वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए | संस्थागत वार्षिक शुल्क 500/-- रुपए

आजीवन शुल्क 6,000/-- रुपए | संस्थागत आजीवन शुल्क 20,000/-- रुपए

डाक शुल्क अलग

अंक 119 में

1. हमारे लेखक -- 106
2. संपादकीय -- 107
3. भारत के संविधान में धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार : क्या और क्यों? / **प्रो. देवदत्त शर्मा** -- 111
4. सबका रक्षक एक है भारत का संविधान / **पूरन चंद सरीन** -- 118
5. संसद सदस्यों/विधेयकों के विशेषाधिकार और रिश्वतखोरी के मामले : संदर्भ सीता सोरेन बनाम भारत संघ मामले में उच्चतम न्यायालय का निर्णय / **जगदीश चंद चौहान** -- 122
6. शून्य से शिखर तक दिव्यांगजन और दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 / **सन्तोष खन्ना (वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)** -- 127
7. धार्मिक सहिष्णुता एवं पंथ निरपेक्षता : भारतीय परिदृश्य में रामास्वामी उड़यार वाद का विवेचन / **डॉ. एस.एस. दास** -- 136
8. स्त्रीधन किसका? / **नेहा राठी** -- 145
9. पर्यावरण संरक्षण एवं राजस्थान उच्च न्यायालय का आदेश / **डॉ. चंद्र प्रकाश** -- 151
10. नई कर व्यवस्था : एक विश्लेषण / **डॉ. सुधा कुमारी** -- 157
11. साइबर अपराध और साइबर विधि : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन / **डॉ. निशा केवलिया** -- 161
12. प्रोन्नति मानकों पर उड़ीसा उच्च न्यायालय का एक महत्त्वपूर्ण फैसला / **सन्तोष खन्ना** -- 175
13. यदि धर्म परिवर्तन प्रेक्टिस जारी रही तो भारत में बहुसंख्यक अल्पसंख्यक हो जाएँगे : इलाहाबाद उच्च न्यायालय / **सन्तोष खन्ना** -- 177
14. चमेली देवी इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, इंदौर में नवीन आपराधिक क़ानूनों पर कार्यशाला का आयोजन (रिपोर्ट) / **डॉ. सुरेन्द्र असाटी** -- 178
15. Loopholes in Intellectual Property Rights and the AI Technologies / **Dr. Neema Qamar and Nasimuddin Khan** -- 180
16. Protection of Private Property Against Arbitrary Acquisition : An Analysis / **Dr. Radhe Shyam Prasad** -- 184
17. Evaluating Change : The Impact of New Criminal Laws on the Indian Legal System / **Dr. Satyam Chansoriya** -- 191
18. Lawyers Not Liable Under Consumer Protection Act : Supreme Court of India / **Dr. Prem Lata** -- 196

लेखक मंडल

देवदत्त शर्मा : सेवा निवृत्त एसोसिएट प्रोफेसर (विधि), डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, लखनऊ
पता : सी-469/एफ, एम.आई.जी. डुप्लेक्स, इंदिरा नगर, लखनऊ, पिन-226016
मोबाइल : 9236003140

पूरनचंद सरीन : ई-मेल : pooranchandsaein@gmail.com

जगदीश चंद चौहान : पूर्व संसदीय अधिकारी, लोक सभा, नई दिल्ली

सन्तोष खन्ना (वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर) : संपादक विधि भारती परिषद

डॉ. एस.एस. दास : विधि संकाय, न्यायिक अध्ययन केंद्र, डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय, डिब्रूगढ़-786004, असम, **मोबाइल :** 91-9435594172,
ई-मेल :das77juris.ram@gmail.com/ssdas@dibru.ac.in

नेहा राठी : उप-निदेशक राज्य सभा सचिवालय, नई दिल्ली

डॉ. चंद्र प्रकाश : असि. प्रो. (समाजशास्त्र), राजकीय स्नातकोत्तर महिला वाणिज्य महाविद्यालय, हल्द्वानी (नैनीताल)
मोबाइल : 9675072977, **ई-मेल :** cpaagarkoti@gmail.com

डॉ सुधा कुमारी : (आईआरएस), नई दिल्ली

डॉ. निशा केवलिया : प्राचार्य, चमेली देवी इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, इंदौर (म. प्र.)

डॉ. नीमा कमर : अतिथि संकाय, (विधि विभाग, संत गहिरा गुरु विश्वविद्यालय अंबिकापुर, सरगुजा, सीजी)

नसीमुद्दीन खान : अतिथि संकाय, (विधि विभाग, संत गहिरा गुरु विश्वविद्यालय अंबिकापुर, सरगुजा, सीजी)

डॉ. राधे श्याम प्रसाद : एसोसिएट प्रोफेसर (क़ानून), लखनऊ विश्वविद्यालय (यूपी), भारत
ई-मेल : radheshyampd@gmail.com

डॉ. सत्यम चंसोरिया : अधिवक्ता, क़ानून में पीएचडी, यूजीसी नेट एमपीपीएससी सेट

Dr. Prem Lata : Former Member of District Consumer Forum Govt of National Capital Region

संपादकीय

भारत का संविधान और चुनाव

भारत के संविधान के अनुसार अठारहवीं लोकसभा के लिए वर्ष 2024 में चुनाव अपेक्षित थे। अतः संविधान के इन प्रावधानों के अनुसार भारत के चुनाव आयोग ने इन चुनावों को सफलतापूर्वक उचित और निष्पक्ष तरीके से संपन्न कराया जिसके नतीजे 4 जून, 2024 को घोषित किए गए। बेशक सत्तारूढ़ भाजपा की सीटें पिछली लोकसभा की तुलना में घट गईं किंतु लोकसभा में सबसे बड़े दल के रूप में उभरने के कारण एवं एनडीए गठबंधन के साथ उसकी सरकार बन गई है और मोदी जी ने तीसरी बार प्रधानमंत्री की शपथ-ग्रहण कर तेजी से कामकाज करना आरंभ कर दिया है और लोकसभा के पहले सत्र में सबके शपथ-ग्रहण के साथ लोकसभा के अध्यक्ष का चुनाव भी संपन्न हो गया है। राष्ट्रपति का अभिभाषण भी हो गया है। यह सब भारत के संविधान और लोकसभा के नियमानुसार संपन्न हुआ है जबकि विपक्ष जिसकी इस बार अधिक सीटें आई हैं और कांग्रेस को भी 99 सीटें मिल गई हैं जिससे इस बार प्रतिपक्ष के नेता के रूप में श्री राहुल गांधी को जिम्मेदारी दी गई हैं। आशा की जानी चाहिए कि वह अपनी इस महत्वपूर्ण जिम्मेदारी का गंभीरता से निर्वहन करेंगे।

आइए, संसदीय चुनावों संबंधी भारत के संविधान पर एक नजर डालते हैं। भारत के संविधान के अनुच्छेद 79 के अनुसार संसद राष्ट्रपति, राज्यसभा और लोकसभा से मिलकर बनती है। राष्ट्रपति का निर्वाचन पाँच वर्ष की अवधि के लिए होता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 80 के अनुसार राज्य सभा का कभी विघटन नहीं होता लेकिन इसके हर दूसरे वर्ष की समाप्ति पर दो तिहाई सदस्य सेवानिवृत्त हो जाते हैं। राज्य सभा सदस्य संरक्षण 238 और उनका आपात कार्यकाल छः वर्ष का होता है। राज्य सभा के 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा नामांकित किए जाते है जहाँ तक लोक सभा का संबंध है, लोक सभा सांसद पाँच वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित होते हैं। अतः लोकसभा के हर पाँच वर्ष पर चुनाव कराए जाने होते हैं। हाँ, यदि कभी लोकसभा को समय से पहले भंग करना पड़ता है तो 5 वर्ष से पहले भी चुनाव करवाने पड़ सकते हैं। इसी अनुच्छेद में यह प्रावधान भी है कि स्थिति के दौरान लोकसभा का कार्यकाल प्रथमतः एक वर्ष तक के लिए बढ़ाया जा सकता है और उसके बाद केवल उसका कार्यकाल 6 महीने तक ही बढ़ाया जा सकता है।

भारत का संविधान 1950 में लागू हुआ, उसके बाद लोकसभा के आम चुनाव हर पाँच वर्ष की अवधि की समाप्ति के अनुसार होते रहते हैं और कई बार मध्यावधि चुनाव भी कराने

पड़े हैं। भारत में लोकसभा के मध्यावधि चुनाव केवल चार बार ही हुए जब लोकसभा अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर पाई। यह मध्यावधि चुनाव क्रमशः 1980, 1991, 1998 और 1999 में हुए। वर्ष 1977 के लोक सभा चुनाव लगभग छः वर्ष की अधिक अवधि के बाद 1977 में हुए। 1971 में निर्वाचित लोकसभा लगभग 6 वर्ष से ज्यादा तक की अवधि तक चली क्योंकि आपात स्थिति के दौरान इसका कार्यकाल बढ़ा दिया गया था।

आपात स्थिति के बाद जब 1977 में चुनाव हुए तो उसमें कांग्रेस को बहुमत नहीं मिला। उस समय जनता पार्टी की सरकार बनी जिसके प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई बने थे किंतु मुरार जी देसाई की सरकार अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर पाई और मध्यावधि चुनाव कराने पड़े और इन 1980 में ही चुनाव में कांग्रेस पुनः सत्ता में आई और इंदिरा गांधी पुनः प्रधानमंत्री बनी। अगली लोकसभा के चुनाव 1985 में हुए जो प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या के बाद कराए गए थे। इन चुनावों में कांग्रेस को अभूतपूर्व बहुमत मिला था और इसके प्रधानमंत्री राजीव गांधी ही कांग्रेस के प्रधानमंत्री बने। वर्ष 1991 में फिर मध्यावधि चुनाव हुए और कांग्रेस के प्रधानमंत्री नरसिंह राव बने और उन्होंने भी अपना कार्यकाल पूरा किया।

1996 में लोकसभा चुनाव में पहली बार बीजेपी सबसे बड़ी पार्टी बनी और अटल बिहारी वाजपेई प्रधानमंत्री बने परंतु उनकी सरकार केवल 13 दिन तक ही चली। उसके बाद देवगौड़ा और बाद में इंद्र कुमार गुजराल प्रधानमंत्री बने किंतु गठबंधन की यह सरकारें नहीं चल सकी और 1998 में लोकसभा के मध्यावधि चुनाव कराने पड़े। इन चुनावों में भारतीय जनता पार्टी की जीत हुई और अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री बने। उसके बाद वर्ष 2004 और वर्ष 2009 में हुए चुनावों में प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह रहे और वर्ष 2014 और वर्ष 2019 में श्री नरेंद्र मोदी ने प्रधानमंत्री के पद को सुशोभित किया। 2024 के लोकसभा चुनावों के बाद तीसरी बार श्री नरेंद्र मोदी ही प्रधानमंत्री बने हैं।

भारतीय आम चुनाव 2024 में 18वीं लोकसभा के सभी 543 सदस्यों को चुनने के लिए भारत में 19 अप्रैल से 1 जून, 2024 तक सात चरणों में हुए। चुनाव के नतीजे 4 जून 2024 को घोषित किए गए। यह देश के इतिहास में अब तक का सबसे बड़ा चुनाव था जिसने 2019 के भारतीय आम चुनावों को पीछे छोड़ दिया। यह 44 दिनों तक चला जो 1951-52 के भारतीय आम चुनावों के बाद दूसरा है। तत्कालीन, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने दो कार्यकाल को पूरा करने के बाद लगातार तीसरे कार्यकाल के लिए चुनाव लड़ा और वह तीसरी बार प्रधानमंत्री बनाए गए।

140 करोड़ लोगों की आबादी में से लगभग 100 करोड़ लोग वोट देने के पात्र थे, जो कुल आबादी के 70 प्रतिशत के बराबर है। चुनाव में 64.2 करोड़ मतदाताओं ने भाग लिया और उनमें से 31.2 करोड़ महिलाएँ थीं, जिससे यह महिला मतदाताओं की अब तक की सबसे अधिक भागीदारी थी। यह अब तक का सबसे बड़ा चुनाव था, जो पिछले चुनाव से आगे निकल गया। मतदाताओं की इतनी बड़ी संख्या के साथ शांतिपूर्ण चुनाव संपन्न कराना एक बहुत

बड़ी उपलब्धि है। यहीं भारतीय लोकतंत्र की विशेषता है। चुनाव इवीएम तंत्र के माध्यम से कराए गए और इस बार आए परिणामों के कारण लगभग सभी इवीएम तंत्र से संतुष्ट नज़र आए, अन्यथा उनके पक्ष में वाँछित परिणाम न आने से वह हमेशा इवीएम तंत्र पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया करते थे और वह इस तंत्र को गलत सिद्ध करने के लिए अपनी सारी ऊर्जा का अपव्यय कर डालते थे।

लोकसभा में प्रतिपक्ष के नेता की भूमिका

भारत में पूरे एक दशक तक अर्थात् 2014 से लेकर 2024 तक लोकसभा में विपक्ष का कोई नेता नहीं था क्योंकि संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार विपक्ष का नेता तब बनाया जाता है जब लोकसभा में विपक्ष में सबसे बड़े दल के सदस्यों की संख्या लोकसभा की कुल सदस्य संख्या का 10 प्रतिशत हो। 2014 से 2019 तक चाहे कांग्रेस के लोकसभा में विपक्षी दलों में सबसे अधिक सदस्य थे परंतु 10 प्रतिशत सदस्य संख्या से कम थे अर्थात् केवल 44 सदस्य ही थे। इसी प्रकार, 2019 में भी जब नई लोकसभा का गठन हुआ तो लोकसभा में कांग्रेस के कुल सदस्य केवल 52 ही थे जो लोकसभा के कुल सदस्य संख्या की तुलना में 10 प्रतिशत से कम थी।

यह बड़े सन्तोष की बात है कि 2024 में अब जब नई लोकसभा का गठन हुआ तो लोकसभा में कांग्रेस के सदस्यों की संख्या बढ़कर 99 हो गई जिसके कारण वह लोकसभा में विपक्ष के नेता के पद के लिए पात्र बन गई।

वैसै वर्ष 1969 के बाद ही लोकसभा में विपक्षी नेता के पद को आधिकारिक मान्यता दी गई और सबसे पहले लोकसभा में राम सुभग सिंह विपक्षी नेता बने थे और बाद में 1970 से लेकर 1977 तक लोकसभा में विपक्ष का नेता नहीं था।

लोकसभा में विपक्ष के नेता का स्तर कैबिनेट मंत्री के बराबर होता है और वह उन समितियों का सदस्य होता है जो केंद्रीय जाँच ब्यूरो के निदेशक, मुख्य चुनाव आयुक्त और चुनाव आयुक्त, प्रवर्तन निदेशालय के निदेशक, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के अध्यक्ष, लोकायुक्त प्रमुख का चयन करती हैं। वह व्यय समिति का भी सदस्य होता है।

नेता प्रतिपक्ष बहुत ही गरिमा और जिम्मेदारी का पद होता है। उसे शैडो प्रधानमंत्री भी कहा जाता है क्योंकि आमतौर पर नेता प्रतिपक्ष होने के नाते यह समझा जाता है कि अगर कभी सत्ता रूढ़ दल किसी वजह से सरकार नहीं चला पाता और सरकार गिरने पर प्रायः वहीं प्रधानमंत्री बनता है। अब तक राजीव गांधी, सोनिया गांधी, श्री लाल कृष्ण आडवाणी, श्री अटल बिहारी वाजपेई और सुषमा स्वराज जैसे धुरंधर संसद सदस्य इस पद को सुशोभित कर चुके हैं।

वर्ष 2024 में लोकसभा चुनावों के साथ आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और सिक्किम विधानसभा के चुनाव भी हुए ये। अब इसी सितंबर-अक्तूबर में हरियाणा, महाराष्ट्र और झारखंड विधान

सभाओं के चुनाव होने हैं। भारत में हर समय कहीं न कहीं चुनाव होते रहते हैं। हालाँकि भारतीय लोकतंत्र के आरंभ में लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के साथ-साथ चुनाव होते थे और फिर यह क्रम टूट गया और अब अलग-अलग चुनाव होते हैं।

लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाने के मसले पर लंबे समय से बहस चल रही है। लाल कृष्ण आडवाणी ने बहुत पहले यह माँग उठाई थी कि दोनों के एक साथ चुनाव कराए जाएँ। प्रधानमंत्री मोदी ने भी इस विचार का समर्थन कर इसे आगे बढ़ाया है। इस मसले पर चुनाव आयोग, नीति आयोग, विधि आयोग और संविधान समीक्षा आयोग विचार कर चुके हैं। अभी हाल ही में विधि आयोग ने देश में एक साथ चुनाव कराए जाने के मुद्दे पर विभिन्न राजनीतिक दलों, क्षेत्रीय पार्टियों और प्रशासनिक अधिकारियों की राय जानने के लिए तीन-दिवसीय कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया था। इस कॉन्फ्रेंस में कुछ राजनीतिक दलों ने इस विचार से सहमति जताई, जबकि ज्यादातर राजनीतिक दलों ने इसका विरोध किया। उनका कहना है कि यह विचार लोकतांत्रिक प्रक्रिया के खिलाफ है। ज़ाहिर है कि जब तक इस विचार पर आम राय नहीं बनती तब तक इसे धरातल पर उतारना संभव नहीं होगा। किंतु इस तरह देश हमेशा चुनाव के मोड़ में बना रहता है और इससे देश का विकास और समाज कल्याण की गति अवरुद्ध होती है और देश के संसाधनों का अनावश्यक रूप से दोहन होता है। इस कारण देश में हर समय वोट की राजनीति होती रहती है जोकि देशहित में तो कतई नहीं है।

चुनाव लंबे समय तक चलने से देश में एक प्रकार से तनाव और वैमनस्य का वातावरण बना रहता है जो देश की एकता के लिए घातक है। चुनावों के दौरान सरकार के अनेक अधिकारी और कर्मचारी चुनाव ड्यूटी में रहने से अपना निर्धारित काम काज समय पर नहीं कर पाते हैं अतः इस प्रकार सरकारी मानव संसाधन का सही इस्तेमाल नहीं हो पाता। कुछ राजनीतिक दलों का यह तर्क निराधार है कि अलग-अलग चुनाव लोकतंत्र मजबूत करते हैं। चुनाव तो चुनाव होते हैं चाहे अलग-अलग हों या एक साथ। एक देश एक चुनाव जनहित में हैं। एक देश एक चुनाव कोई अनूठा प्रयोग नहीं है, क्योंकि 1952, 1957, 1962, 1967 में ऐसा हो चुका है, जब लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव साथ-साथ करवाए गए थे। यह क्रम तब टूटा जब 1968-69 में कुछ राज्यों की विधानसभाएँ विभिन्न कारणों से समय से पहले भंग की गई थी। अब बुद्धिमानी इसी में है कि देश में लोक-सभा और राज्य विधान सभाओं का एक साथ चुनाव कराने की पुनः परम्परा आरंभ कर देश को मजबूत किया जाए।

❑

प्रो. देवदत्त शर्मा

भारत के संविधान में धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार : क्या और क्यों?

भारत के संविधान के अनुच्छेद 26 में धर्म की स्वतंत्रता के अधिकार का वर्णन करते हुए कहा गया है कि --

''अंतःकरण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता -- (1) लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग (अनुच्छेद 12 से अनुच्छेद 35) के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार का समान हक़ होगा।

(2) इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विद्यमान विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या राज्य (क) को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो --

(क) धार्मिक आचरण से संबद्ध किसी अर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाकलाप का विनियमन या निर्बंधन करती है।

(ख) सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए या सार्वजनिक प्रकार की हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं को हिंदुओं के सभी वर्गों और अनुभागों के लिए खोलने का उपबंध करती है।

स्पष्टीकरण 1 : कृपाण धारण करना और लेकर चलना सिक्ख धर्म के मानने का अंग समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण 2 : खंड (2) के उपखंड (एन) में हिंदुओं के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत सिक्ख, जैन या बौद्ध धर्म के मानने वाले व्यक्तियों के प्रति निर्देश है और हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं के प्रति निर्देश का अर्थ तदनुसार लगायार जाएगा।''

इस अनुच्छेद को समझने के लिए अग्रलिखित शीर्षकों को समझना होगा।

धर्म की स्वतंत्रता पर इस अनुच्छेद में लगाए गए निर्बंधनों के अधीन सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की व धर्म की स्वतंत्रता का मूल अधिकार दिया गया है, इसके अतिरिक्त यह मूल अधिकार इस भाग अर्थात् अनुच्छेद 12 से 35 तक के अन्य उपबंधों के भी अधीन है।

समी व्यक्ति : उक्त निर्बंधनों के अधीन भारत के सभी व्यक्तियों के साथ-साथ भारत में रह रहे गैर-भारतीयों को भी यह अधिकार प्राप्त है। सभी व्यक्तियों के अंतर्गत विधिक व्यक्ति (Juristic person) भी आते हैं किंतु विधिक व्यक्ति जैसे निगम या कोई संस्था, धर्म का आचरण

या धर्म का प्रचार नहीं कर सकती परंतु उन सस्थाओं के कार्यकर्त्ता, धर्म का आचरण या प्रचार कर सकते हैं। अतः किसी धार्मिक संस्था का प्रमुख इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त अधिकार के उल्लंघन का परिवाद कर सकता है।[2] यदि किसी मठाधिपति के विरुद्ध दुर्विनियोजन आदि के आरोपों के विरुद्ध जाँच के लंबित रहने के अंतर्गत मठ के दैनिक कार्यों के लिए कोई प्रशासक नियुक्त किया जाता है तो इससे मठाधिपति के अधिकार का हनन नहीं होता है।[3]

धर्म की परिभाषा : भारत के संविधान में 'धर्म' की परिभाषा नहीं दी गई है, अतः धर्म का अर्थ जानने के लिए हमें न्यायिक निर्णयों की सहायता लेनी पड़ेगी। उच्चतम न्यायालय द्वारा धर्म का अर्थ बताते हुए कहा गया है कि "धार्मिक स्वातंत्र्य, सैद्धांतिक विश्वासों तक ही सीमित नहीं। इसके अंतर्गत, धर्म के अनुसरण में किए गए कार्य मी हैं और इसमें कर्मकांडों, धार्मिक कार्यों, संस्कृति और उपसनाओं की पद्धतियों की गारंटी है जो धर्म के अभिन्न अंग है, धर्म या धार्मिक परिपाटी का आवश्यक भाग क्या है; उसका निर्धारण न्यायालयों द्वारा विशिष्ट धर्म के सिद्धांतों के प्रति निर्देश से किया जाएगा और इसके अंतर्गत ऐसी परिपाटियों मी आती हैं जिन्हें समुदाय द्वारा धर्म का भाग समझा जाता है।[4]

अनुच्छेद 25 के अनुसार केवल आस्था या विश्वास के विषयों पर ही आचरण करने या उनका प्रचार करने की स्वतंत्रता ही नहीं है बल्कि वे सभी धार्मिक कृत्य और संस्कार करने की स्वतंत्रता भी है जिन्हें किसी धर्म के अनुयायी धर्म का अंग मानते है।[5] धर्म आस्था का विषय है। ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करना, धर्म की आवश्यक शर्त नहीं है। उदाहरणार्थ, बौद्ध धर्म व जैन धर्म के अनुयायी ईश्वरवादी नहीं हैं। प्रत्येक धर्म के अनुयायर्थी कुछ विश्वास व सिद्धांतों को मानते हैं जो उनके आध्यात्मिक उत्कर्ष में आवश्यक है किंतु यह धारणा उचित नहीं है कि धर्म, विश्वास मात्र ही है। धार्मिक आचार या धार्मिक विश्वास के अनुसरण में किए कृत्य धर्म के अंग हैं। इस प्रकार विशिष्ट सिद्धांतों पर आस्था या विश्वास भी धर्म के भाग हैं।

धर्म का सारवान भाग क्या है? यह प्राथमिक रूप से धर्म के सिद्धांतों से ही जाना जा सकता है। उदाहरणार्थ, ईस्लाम धर्म में गाय की बलि देना, ईस्लाम धर्म का आवश्यक भाग नहीं है।

भारत में धर्म के आधार पर विभेद नहीं किया जाएगा। अनुच्छेद 16 (2), भारत में कोई भी व्यक्ति अपने धार्मिक विश्वासों के लिए राज्य के प्रति उत्तरदायी नहीं है तथा राज्य किसी भी व्यक्ति को कोई विशेष पूजा-पद्धति अपनाने के लिए बाध्य नहीं कर सकता है। कोई भी व्यक्ति अपने अंतःकरण के अनुसार कोई भी पूजा-पद्धति अपना सकता है।

अमेरिका के संविधान में किया गया प्रथम संशोधन यह उपबंधित करता है कि ''कांग्रेस किसी धर्म स्थापन में या उसके स्वतंत्र्य प्रयोग को निषिद्ध करने के संबंध में कोई क़ानून नहीं बनाएगी।'' इस प्रकार, अमेरिका के संविधान में धर्म की स्वतंत्रता पर कोई निर्बंधन नहीं लगाया गया है जबकि भारत के संविधान में धर्म की स्वतंत्रता पर निर्बंधनों का उल्लेख किया गया है।

भारत के संविधान का अनुच्छेद 25 (1), लोक व्यवस्था, सदाचार व स्वास्थ्य तथा इस भाग (अनुच्छेद 12 से अनुच्छेद 35 तक) के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान हक़ प्रदान करता है।

अनुच्छेद 25 के खंड 2 के उपखंड (क) और उपखंड (ख) के अधीन राज्य इस अधिकार पर विधि बना कर अग्रलिखित आधारों पर निर्बंधन लगा सकता है --

(क) धार्मिक आचरण से संबद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक-क्रियाकलाप को विनियमन या निर्बंधन करने के लिए।

(ख) सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए या सार्वजनिक प्रकार की हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं को हिंदुओं के सभी वर्गों और अनुभागों के लिए खोलने का उपबंध करने के लिए।

अंतःकरण की और धर्म को मानने की स्वतंत्रता : अनुच्छेद 25 खंड (1) द्वारा सभी व्यक्तियों को दो प्रकार की स्वतंत्रता दी गई है --

(1) अंतःकरण की स्वतंत्रता।

(2) धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने की समान स्वतंत्रता।

अंतःकरण की स्वतंत्रता का तात्पर्य, आत्यान्तिक आंतरिक स्वतंत्रता से है जिसके माध्यम से व्यक्ति ईश्वर के साथ अपनी इच्छानुसार संबंधों को स्थापित करता है, यह स्वतंत्रता जब बाह्य रूपों में व्यक्त की जाती है तो उसे धर्म का मानना, आचरण करना और प्रचार करना कहते हैं। धर्म को मानने की स्वातंत्रता का अर्थ है कि आस्थावान व्यक्ति अपनी निष्ठा को सार्वजनिक रूप में प्रकट कर सकता है। आचरण करने की स्वतंत्रता का अर्थ है धर्म द्वारा विहित कर्त्तव्यों, कर्मकांडों और धार्मिक कृत्यों को प्रदर्शित करने की स्वतंत्रता, जो उसके धर्म द्वारा विहित किए गए हो। धर्म के प्रचार करने का अर्थ है कि अपने धार्मिक विचारों को दूसरों तक संप्रेषित करना। प्रचार करने के अधिकार में किसी व्यक्ति को अपना धर्म बदलने को बाध्य करने का अधिकार नहीं है।

रवि स्टैनीस्त्राव बनाम मध्य प्रदेश राज्य के वाद में कहा गया कि यदि कोई व्यक्ति अपने धार्मिक विचारों को दूसरों तक संप्रेषित के करने बजाय उन्हें धर्म परिवर्तन करने को विवश करता है तो यह दूसरों की अंतःकरण की स्वतंत्रता पर सीधा आघात करता है, जो भारत के संविधान द्वारा वर्जित है। यदि विधान-मंडल क़ानून बना कर धर्म परिवर्तन का प्रतिषेध करता है तो यह सांविधानिक होगा।

धर्म-स्वातंत्र्य पर निर्बंधन

धर्म-स्वातंत्र्य के अधिकार पर अग्रलिखित आधारों पर निर्बंधन लगाए जा सकते हैं --

1. लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के हित में,
2. इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन,
3. धार्मिक आचरण से संबद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक किया कलाय का विनियमन या निर्बंधन,
4. सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए।

लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के हित में निर्बंधन

धर्म या धार्मिक कार्यों के नाम से कोई भी ऐसा कार्य नहीं किया जा सकता है जो लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के हित के विपरीत हो, अर्थात् लोक-व्यवस्था, सदाचार स्वास्थ्य के हित में विधि बनाकर निर्बंधन लगाए जा सकते हैं, उदाहरणार्थ, पुलिस अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत जानवरों का काटना और सार्वजनिक स्थान पर शरीर का अभद्र प्रदर्शन करना निषिद्ध कर दिया गया है। इन कार्यों को धर्म या धार्मिक कृत्य के नाम पर औचित्यपूर्ण नहीं ठहराया जा सकता है। इसी प्रकार, धर्म के नाम पर छुआछूत (अस्पृश्यता) का अंत किया गया है। (अनुच्छेद 17)

धर्म के प्रचार के नाम पर किसी व्यक्ति को बलपूर्वक या अन्य दबाव डालकर धर्म-परिवर्तन के लिए विवश करने की अनुमति नहीं है क्योंकि ऐसे कार्यों से लोक व्यवस्था भंग होने की बलवती संभावना है। **स्टेनीस्त्राव बनाम मध्य प्रदेश** के वाद में मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्य द्वारा बलपूर्वक धर्म-परिवर्तन को रोकने के लिए पारित अधिनियमों की उस आधार पर सांविधानिक घोषित किया गया कि उनका उद्देश्य समाज में लोक-व्यवस्था को भंग होने से बचाना है। अतः राज्य को इन अधिनियमों को पारित करने की शक्ति प्राप्त है। बलपूर्वक या अन्य दबाव में धर्म-परिवर्तन से लोक-व्यवस्था के भंग होने की आशंका है, जिसको राज्य की क़ानून बनाकर रोकने की शक्ति प्राप्त है।[7]

गुलाम अब्बास बनाम उत्तर प्रदेश के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय द्वारा दो धार्मिक समुदायों के बीच विवाद को निपटाने के उद्देश्य से क़ब्रगाह को एक स्थान से दूसरे स्थान को हटाने के लिए दिया गया निर्देश, लोक-व्यवस्था के हित में किया गया है और धार्मिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं है। इस वाद में शिया और सुन्नियों के बीच वाराणसी के दोसीपुर मुहल्ले में एक पूजा स्थल को लेकर काफी समय से विवाद चल रहा था। सुन्नियों की दो क़ब्रें शियाओं की भूमि पर स्थित थी, इससे दोनों समुदायों में बहुत समय से विवाद था। इस समस्या के स्थायी हल निकालने के लिए न्यायालय ने दोनों संप्रदाय के सदस्यों की एक समिति गठित की। समिति ने सिफारिश की कि सुन्नियों की दो क़ब्रगाहों को शियाओं के पूजा-स्थल से हटाकर ही इस समस्या को सुलझाया जा सकता है। सुन्नी संप्रदाय के लोगों ने इस सिफारिश को इस आधार पर चुनौती दी कि इससे उनकी अनुच्छेद 25 और अनुच्छेद 26 के अधीन प्राप्त धार्मिक स्वतंत्रता का उल्लंघन होता है किंतु न्यायालय ने यह निर्णय दिया

कि समिति की सिफारिशों को लागू करने से अपीलार्थियों के धार्मिक स्वतंत्रता का उल्लंघन नहीं होता है। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 25 व अनुच्छेद 26 द्वारा प्रदत्त स्वतंत्रता आत्यंतिक नहीं है बल्कि सापेक्ष है और लोक-व्यवस्था बनाए रखने के लिए निर्बंधन लगाए जा सकते हैं।

आचार्य जगदीश्वरानंद अवधूत बनाम पुलिस कमिश्नर कलकत्ता[10] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि आनंदमार्गियों द्वारा सार्वजनिक स्थानों में ख़तरनाक शस्त्रों व कपालों के साथ तांडव नृत्य करना उनके संप्रदाय के अनुयायियों के धर्म का आवश्यक धार्मिक कर्मकांड नहीं है अतः दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन लोक-व्यवस्था और सदाचार के हित में उसे प्रतिबंध किया जा सकता है।

इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन निर्बंधन

अनुच्छेद 25 द्वारा प्राप्त धर्म की स्वतंत्रता भाग 3 (अनुच्छेद 12 से अनुच्छेद 35 तक) के उपबंधों के अधीन है। अनुच्छेद 14, में समता के अधिकार, अनुच्छेद 15 में धर्म के आधार पर विभेद न करने का उपबंध किया गया है, अनुच्छेद 17 में अस्पृश्यता का अंत किया गया है। अनुच्छेद 19 में वाक् स्वातंत्र्य आदि अधिकार प्रत्याभूत किए गए हैं, ये सभी मूल अधिकार विहित निर्बंधनों के अधीन हैं। अनुच्छेद 25 के खंड (1) द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता, इस अनुच्छेद के खंड (2) के निर्बंधनों के अधीन है और अनुच्छेद 12 से अनुच्छेद 35 तक वर्णित उपबंधों के अधीन है। इसीलिए अनुच्छेद 31 (2) के अधीन राज्य के सर्वोपरि अधिकार से इस अनुच्छेद ने धार्मिक संपत्ति को कोई छूट नहीं दी है।[12] धार्मिक संपत्ति अनुच्छेद 19 (2)-(6) के अधीन सामूहिक हित के लिए लगाए गए निर्बंधनों के और अनुच्छेद 19 (1) के विभिन्न उपखंडों द्वारा अन्य नागरिकों को प्रत्याभूत अधिकारों के अधीन रहेगी।[13]

3. धर्म से संबद्ध आर्थिक, वित्तीय राजनीतिक क्रियाओं का विनियमन : जिस धार्मिक आचरण में धर्म का तत्त्व प्रधान रूप से होता है उन्हें धर्म से सम्बद् क्रिया कहते है। इनमें लौकिक क्रियाएँ सम्मिलित नहीं है क्योंकि उनमें धार्मिक तत्व कम और सांसरिक तत्व अधिक होता है। यह पता लगाना कठिन है कि कौन-सी क्रियाएँ धार्मिक आचरण के अंतर्गत आती है और कौन-सी क्रियाएँ, आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक अथवा लौकिक है जो धर्म से संबद्ध है। प्रत्येक मामले में इसका निर्धारण, तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाता है। कौन-सी क्रियाएँ धर्म या धार्मिक परिपाटी के आवश्यक अंग है, उसका निर्धारण भी न्यायालयों द्वारा धर्म विशेष के प्रति निर्देश से समझा जाता है और उसके अंतर्गत ऐसी परिस्थितियाँ भी आती हैं जिन्हें समुदाय द्वारा धर्म का भाग समझा जाता है।

मोहम्मद हनीफ कुरेशी बनाम बिहार राज्य[15] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया कि बकरीद के त्यौहार पर गाय काटना, मुस्लिम धर्म का अंग नहीं है। अतः राज्य इसको निषिद्ध कर सकता है।

एडिलेड कम्पनी बनाम कामनवेल्थ[16] वाद के मामले में अभिनिर्धारित किया गया कि कोई भी व्यक्ति धार्मिक आचरण और प्रचार के अधिकार की स्वतंत्रता के प्रयोग में युद्ध-विरोधी अफवाह नहीं फैला सकता है जब देश युद्धरत हो। धार्मिक विश्वास से उत्पन्न राजनैतिक क्रियाओं के आचरण को संविधानिक संरक्षण प्रदान नहीं किया जा सकता है।

आर.एम.के. सिद्धे बनाम बिहार राज्य[17] के बाद में अभिनिर्धारित किया गया कि युद्ध एवं पिंडदान की क्रियाएँ, हिंदू धर्म का आवश्यक अंग है।

आचार्य जगदीश्वरानंद[18] के वाद में अभिनिर्धारित किया गया है कि आनंदमार्गियों द्वारा सार्वजनिक स्थानों पर ख़तरनाक शस्त्रों, कपालों एवं जलती मशालों को लेकर तांडव नृत्य करना उनके धर्म का आवश्यक अंग नहीं है और लोक व्यवस्था के हित में इन पर रोक लगाई जा सकती है।

4. समाज कल्याण और समाज सुधार विवयक विधियाँ

अनुच्छेद 25 के खंड (2) के उपखंड (ख) के अनुसार इस अनुच्छेद की कोई बात किसी विद्यमान विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या राज्य को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए या सार्वजनिक प्रकार की हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं को हिंदुओं के सभी वर्गों और अनुमागों के लिए खोलने का उपबंध करती है।

इस उपखंड के अंतर्गत सामाजिक कल्याण और सुधार हेतु अग्रलिखित व्यवस्थाएँ की गईः-

1. द्विपत्नी का निषेध[19]
2. हिंदू विवाह अधिनियम,[20]
3. देवदासी की प्रथा, सती-प्रथा या निषिद्ध भोजन या वर्जित कार्य करने या सब प्रकार सामाजिक बहिष्कार,[21]
4. मद्य निषेध[22]

इस उपखंड के अंतर्गत राज्य की हिंदुओं की सार्वजनिक धार्मिक संस्थाओं की हिंदुओं के सब वर्गों के लिए खोलने का अधिकार भी है। यह उपबंध प्रत्येक हिंदु को मंदिरों में प्रवेश करने के विधिक अधिकार की गारंटी प्रदान करता है, इसमें जाति, अस्पृश्यता, सामाजिक असमानता या कोई विशेषाधिकार वर्गों के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा और हिंदू मंदिर, सिक्ख गुरुद्वारा या बुद्ध बिहार व जैन मन्दिरों को हिंदुओं के समी वर्गों और अनुभागों के लिए खोल दिया जाएगा।

इस उपखंड में मंदिर में प्रवेश का अधिकार केवल पूजा करने के उद्देश्य से दिया गया है, कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि मन्दिर पूजा के लिए रात-दिन खुला रहे या उसे ऐसी सेवाओं के सम्पादन की अनुमति दे दी जाए जिसे केवल मंदिर के आचार्य ही करते हैं।[23]

सिक्खों को कृपाण धारण करने का अधिकार भी धार्मिक आचरण का आवश्यक तत्त्व है जो इस उपखंड का अपवाद है किंतु वह एक से अधिक कृपाण धारण नहीं कर सकता है।

इस उपखंड के स्पष्टीकरण 2 के अनुसार हिंदुओं के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत सिक्ख, जैन या बौद्ध धर्म के मानने वाले व्यक्तियों के प्रति निर्देश हैं और हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं के प्रति निर्देश का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा।

❑

संदर्भ

1. इस भाग का अर्थ है, अनुच्छेद (क) राज्य शब्द की परिभाषा, भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 में दी गई है जिसमें कहा गया है कि --
   इस भाग में जब तक संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो 'राज्य' के अंतर्गत मारत की सरकार और संसद तथा राज्यों में से प्रत्येक राज्य की सरकार और विधानमंडल तथा भारत के राज्य-क्षेत्र के भीतर या मारत सरकार नियंत्रण के अधीन सभी स्थानीय व अन्य प्राधिकारी हैं।
2. नरेंद्र बनाम गुजरात राज्य ए-1974, एस.सी. 2054 (पैरा 25)
3. दिग्यादर्शन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, ए-1970, एस.सी. 181 व 188
4. कमिश्नर हिंदू रेलिजस एंडाउमेंट्स मदास बनाम श्री एल.टी. स्वामियार, ए.आई.आर. 1954, सु.को. 282
5. एच.आर.ई. आयुक्त बनाम लक्ष्मीचंद्र 1954, एस.सी.आर. 1005
6. रामानुज बनाम तमिलनाडु राज्य ए-1972, एस.सी. 1586
7. एम.एच. कुरैशी बनाम बिहार राज्य, ए.आई.आर., 1958, सु.को. 731
8. ए.आई.आर. 1977, सु.को. 908, 9. ए.आई.आर. 1977, सु.को. 908
10. ए.आई.आर. 1983, सु.को. 1268, 11. ए.आई.आर. 1983 सु. को-51.
12. सूर्यपाल सिंह बनाम उ.प्र. राज्य 1952, एस.सी.आर. 1056.
13. नरेंद्र बनाम गुजरात राज्य ए-1974, एस.सी. 2099 (पैरा 25)
14. सेशाम्मन बनाम तमिलनाडु राज्य, ए.आई.आर. 1972 सु.को. 1586.
15. ए.आई.आर. 1958, सु.को. 731, 16. (1943) 68 सी.एल.आर 116
17. ए.आई.आर. 1976, पटना, 198, 18. आई.आर. 1983, सु.को 51
19. बंबई राज्य बनाम तीरसु अप्पा माली, ए.आई.आर. 1952, 84
20. ए.आई.आर. 1961, दला. 411
21. सैफुद्दीन साहिब बनाम बंबई राज्य, एन.आई.आर. 1962 सु.को. 853
22. 1980 टैक्स लॉ रिपोर्ट (एन.सी.सी.) 13, पटना,
23. वेंकटरमन बनाम मैसूर राज्य, 200 आई.आर. 1958, सु.को. 255

पूरन चंद सरीन

सबका रक्षक है भारत का संविधान

बहुत ही सोच-विचार के बाद बाबा साहेब अंबेडकर के नेतृत्व में भारत का भाग्य विधाता संविधान रचा गया। यह लचीला और समावेशी तथा सब को साथ लेकर अर्थात् समाहित करने के उद्देश्य से बना है।

संविधान की विशेषता

सबसे पहले इस तथ्य पर आते हैं कि दुनिया में सबसे अधिक संशोधन हमारे ही संविधान में हुए हैं। जब से यह लागू हुआ, औसतन हर साल इसे दो बार मतलब 106 बार संशोधित किया जा चुका है। जब यह है तो समझा जा सकता है कि इसे बदलने का जोख़िम मतलब नये सिरे से लिखवाने का काम कोई सिरफिरा ही सोच सकता है। संविधान को कोई ख़तरा नहीं है, न लोकतंत्र को और न ही इसके अंतर्गत रखे गए किसी भी प्रावधान को क्योंकि इसमें कुछ भी जोड़ा या घटाया जा सकता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि विश्व के सर्वश्रेष्ठ संविधानों से लिए गए महत्त्वपूर्ण और राजकाज भली भाँति चलाने वाले सिद्धांतों और नियमों पर आधारित हमारा संविधान निर्मित हुआ है। इसका लचीलापन इसकी विशेषता है लेकिन यह भी सच है कि कुछ नेताओं और उनके दल की सरकारों ने अपने निजी स्वार्थ के लिए इसी बात का फायदा उठाया और अनेक संशोधनों के जरिये कुछ ऐसी बातें इसमें शामिल करा लीं जिनका ख़ामियाजा पूरे देश को चुकाना पड़ रहा है।

सबसे पहले आरक्षण की ही बात करें। इसे लेकर बहुत भ्रम है कि इसे समाप्त किया जा सकता है। वास्तविकता यह है कि इसकी व्यवस्था एक नियत और सीमित अवधि के लिए की गई थी। इसका उद्देश्य यही था कि आर्थिक रूप से कमजोर और पिछड़े तथा गरीब वर्ग को कुछ समय के लिए राहत मिले और वे शीघ्रातिशीघ्र अपने पैरों पर खड़े होकर राष्ट्र की मुख्य आर्थिक धारा से जुड़ सकें। हुआ यह कि अपना उल्लू सीधा करने में माहिर नेताओं ने न केवल हमेशा के लिए इसे लागू करने में सफलता पाई बल्कि एक बहुत बड़ी आबादी के लिए सशक्त और आत्मनिर्भर बनने के सभी रास्ते बंद कर दिए। लालच का ऐसा मकड़जाल बुना कि उससे बाहर निकला ही न जा सके और वे सदैव उन पर निर्भर रहें। यह गुलामी से भी बड़ी दासता है।

हर जरूरी और गैरजरूरी बात में आरक्षण के कारण एक बड़े वर्ग में निराशा फैलती गई और एक-दूसरे से नफ़रत करने का कारोबार कुछ इस तरह चला कि लोगों के जीवन में शत्रुता का ज़हर घुलता गया। विडंबना यह कि सरकारी नौकरियों में रिजर्व केटेगरी के बहुत से पद भरे ही नहीं जाते क्योंकि योग्य उम्मीदवार नहीं मिलते।जो योग्य हैं वे इनके लिए आवेदन नहीं कर सकते। अफसोस होता है कि हमारे तथाकथित कर्णधारों ने क्या से क्या बना दिया! इसकी कहीं गुहार भी नहीं लगा सकते क्योंकि संविधान में किया संशोधन बीच में आ जाता है।

आरक्षण का मुद्दा इतना व्यापक है कि आरक्षित और अनारक्षित वर्ग के शांतिप्रिय पड़ोसी भी जब तब अशांत होकर अभद्र भाषा से लेकर मारपीट तक पर उतर आते हैं। दोनों को लगता है कि उनके साथ अन्याय हुआ है। इस तरह यह वर्ग संघर्ष जाति संघर्ष में बदल दिया गया। इसका भयानक स्वरूप सामने आने लगा है और ऐसी घटनाएँ देश के विभिन्न भागों में अक्सर होती रहती हैं जब लोग इसकी आड़ में हिंसा, आगजनी और समाज में अफरातफरी का माहौल बनाकर एक-दूसरे से लड़ाने का काम करते दिखाई देते हैं। जो आरक्षण आर्थिक आधार था, उसे स्वार्थी लोगों ने इतना विखंडित कर दिया कि आज यह अपने सबसे विकृत रूप में देश के सामने एक महादैत्य के रूप में खड़ा है। अब जाति ही नहीं धर्म का आधार भी इसमें जोड़ दिया है या जोड़े जाने की कवायद चल रही है। इसका स्वरूप इतना विकराल हो गया है कि अब इसकी भूख कभी शांत नहीं होती दिखाई देती। राजनीतिक दल उसे कभी तृप्त होने ही नहीं देते।

समस्या संविधान के दुरुपयोग की है

संविधान की धाराओं का दुरुपयोग कर और उसके अंतर्गत मिले अधिकारों के नाम पर छोटे-बड़े सभी क़ानूनों का उल्लंघन करने की आज़ादी मानो उन्हें मिल जाती है जो समाज हो या देश सब को कमजोर और तोड़ने का काम करते हैं ताकि उनका मनचाहा होता रहे। इसी कारण आतंकी अफजल की फाँसी के खिलाफ माहौल बन जाता है। आधी रात को सुप्रीम कोर्ट खुलवा दिया जाता है। कितने ही उदाहरण हैं जिनमें किसी-न-किसी अधिकार का हवाला देकर अपराधियों की बचाने की जुगत की जाती है। किसी माफिया डॉन या घोषित आतंकवादी की मृत्यु पर चाहे जेल में हो या बाहर पुलिस की गोली लगे, इतना बवाल खड़ा हो जाता है जैसे मानो वह एक शहीद हो। जुर्म किया, सजा पाई लेकिन पाक दामन बने रहने की हर कोशिश की क्योंकि संविधान की किसी-न-किसी धारा का दुरुपयोग कर ऐसा करना संभव है।

संविधान में मिली आज़ादी के गलत इस्तेमाल के ढेरों उदाहरण हैं। बहुत सी बातें इतनी सामान्य हैं कि हंसी आती है कि यह कैसे हो सकता है! पैदल चलने वालों के लिए बने फुटपाथ पर कब्ज़ा हो, सड़क पर वाहन निर्धारित गति से अधिक दौड़ाना हो, गलत ड्राइविंग के कारण दुर्घटना का कारण बन जाना हो, कचरा फैला कर गंदगी करनी हो, अपनी सुरक्षा

की दुहाई देकर सार्वजनिक स्थलों पर बैरिकेड लगाकर रास्ता बंद करना हो, जैसी घटनाएँ प्रतिदिन देखने को मिल जाती हैं।

हालात ऐसे हो गए हैं कि अपनी मेहनत से अर्जित पूँजी पर उन लोगों का हक़ मानने के लिए क़ानून बनाने की सोच चल रही है है जिनका उस संपत्ति पर कोई अधिकार ही नहीं है। कुछ लोग मार्क्सवादी होने की दुहाई देकर कहते हैं कि चाहे किसी ने कमाया हो, समाज के हर व्यक्ति का उस पर हक़ है और यह बाँटा जाना ही चाहिए। पूँजीवादी कहते हैं कि जिसने अपनी मेहनत, लगन और कौशल से अर्जित किया, यह केवल उसका है। अब यहाँ गांधीवादी विचारधारा आती है जो कहती है कि हमने जो संसाधन निर्मित किए वे भविष्य में आने वाली पीढ़ी की धरोहर हैं। यही सही भी है और सत्य भी। पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह बढ़ती रहे और प्रत्येक नागरिक समृद्धि की ओर बढ़े और राष्ट्र का निर्माण करे, इससे बेहतर और क्या हो सकता है! इससे न किसी से कुछ छीनने की जरूरत पड़ेगी और न ही एक हाथ में अधिकांश संसाधन आ पाएँगे।

यह बात समझ से परे है कि आज भी क्यों कुछ लोग या राजनीतिक दल अमेरिका, रूस, चीन या किसी अन्य देश की व्यवस्था को अपने देश के लिए सही मानते हैं जबकि हकीकत यह है कि कभी भी उधार के शस्त्र से कोई लड़ाई नहीं जीती जा सकती। अपने लोगों, अपने देश और अपने संविधान पर विश्वास होना चाहिए। बापू गांधी का यही मानना था।

जरूरत किस बात की है

अब हम इस बात पर आते हैं कि चाहे संविधान में संशोधनों के जरिये कोई भी क़ानून बना हो, मूल तत्त्व यह है कि भारत की धरती और उसके सभी स्रोत जैसे जल, जंगल, ज़मीन सबके हैं। उन पर किसी एक व्यक्ति, जाति, धर्म, संस्थान का अधिकार नहीं हो सकता। हमारे संविधान का अनुच्छेद 48-ए स्पष्ट शब्दों में पर्यावरण संरक्षण तथा वन एवं वन्य जीवों की सुरक्षा का संबंध सीधे नागरिकों के जीवन के अधिकार से जुड़ा हुआ दर्शाता है। फिर कैसे कोई इनका बँटवारा करने की सोच सकता है। इसका एक उदाहरण देना होगा। एक व्यक्ति मुहम्मद अब्दुल कघसिम ने भ्रष्ट अधिकारियों के साथ मिलकर आंध्र प्रदेश के वारंगल जिले के कोंपल्ली गाँव की वन भूमि पर अपने निजी उपयोग के लिए कब्ज़ा जमा लिया। ध्यान रहे यह चालीस से भी ज्यादा साल पहले हुआ था और फैसला अब आया है और तेलंगाना सरकार पर पाँच लाख का जुर्माना और ग़ैर-क़ानूनी ढंग से कब्जाई ज़मीन को मुक्त कराने का आदेश हुआ है।

यह देश और इसकी धरती किसी व्यक्ति के लिए नहीं है बल्कि हर व्यक्ति इस धरती का है। संविधान में संशोधन कर और न्यायपालिका को गुमराह कर कैसे कोई अपनी मनमानी कर सकता है? हमारे संविधान में अगर कहीं ढिलाई है तो बस यही कि इसके दुरुपयोग करने

की हिम्मत करने से किसी को नहीं रोका जा सकता। बहुमत हो तो कुछ भी करने का अधिकार मिल जाता है। यहाँ तक कि इमरजेंसी लगाकर मूलभूत अधिकारों से भी वंचित किया जा सकता है। संसाधन चाहे हमारे प्राकृतिक स्रोतों से हमें मिले हों या हमने अपने पुरुषार्थ, व्यापार और आर्थिक समझ से जमा किए हों, उन पर किसी सरकार के आदेश से कैसे किसी दूसरे का अधिकार हो सकता है?

जरूरी है कि कोई ऐसा नेतृत्व मिले जो संविधान के इस लूपहोल को बंद कर सके। यह कैसी मजबूरी है कि बहुमत के बल पर कुछ भी संशोधित कराया जा सकता है और नागरिक कुछ कर भी न सकें? दूसरी बात यह कि क़ानून में एक सीमित समय में अंतिम निर्णय करने की व्यवस्था हमारी न्यायपालिका के लिए हो। यदि निर्णय में अनावश्यक देरी हो और समय समाप्त हो जाए तो इसके लिए जिम्मेदार व्यक्ति चाहे वह शासन या प्रशासन का हो, चाहे कार्यपालिका और न्यायपालिका का अथवा ब्यूरोक्रेसी का हो या सांसद और विधायक हो, सब पर संविधान के अंतर्गत बने क़ानून का डंडा समान रूप से चलना चाहिए।

❑

संदर्भ

1. भारत का संविधान
2. समता का अधिकार, अनुच्छेद 14-18
3. अनुच्छेद 335, भारत का संविधान
4. अनुच्छेद 368, भारत का संविधान

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के अंतर्गत सामुदायिक सेवा दंड क्या है?

भारतीय न्याय संहिता, 2023 के अंतर्गत सामुदायिक सेवा दंड की विकिल्पक व्यवस्था की गई है। उदाहरण के तौर पर इस कानून की धारा 356 में मानहानि के मामले में दो वर्ष तक की सजा और जुर्माना या दोनों अथवा सामुदायिक सेवा का दंड दिया जा सकता है। सामुदायिक सेवा दंड की व्यवस्था अपराधियों को सुधारने, उन्हें जेल में घोर अपराधियों की संगति से आने से बचाने और जेलों मैं भीड़ कम करने के उद्देश्य से की गई है।

जगदीश चंद चौहान

संसद सदस्यों/विधेयकों के विशेषाधिकार और रिश्वतखोरी के मामले : संदर्भ सीता सोरेन बनाम भारत संघ मामले में उच्चतम न्यायालय का निर्णय

हमारे देश के सरकारी तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार एक विकट समस्या है जिससे निपटने के लिए समय-समय पर सार्थक प्रयास किए जाते रहे हैं, भ्रष्टाचार निवारण क़ानून बनाए गए हैं, जाँच एजेंसियाँ गठित की गई हैं, जनप्रतिनिधियों के मामलों को शीघ्र निपटाने के लिए एमपी/एमएलए कोर्ट स्थापित किए गए हैं, मगर इन सभी प्रयासों के अपेक्षित परिणाम अभी आने बाकी है। हमारे जनप्रतिनिधियों अर्थात् सांसदों और विधायकों के विरुद्ध रिश्वतखोरी के आरोप अक्सर लगते रहे हैं और ऐसे मामलों में उनके विरुद्ध दो प्रकार से कार्यवाही की जाती रही है। पहली, सदन द्वारा की गई कार्यवाही, दूसरी न्यायालयों द्वारा की गई कार्यवाही।

सदन द्वारा की गई कार्यवाही के संबंध में यह बताना आवश्यक है कि सदन की स्वायत्तता और गरिमा बनाए रखने के लिए हमारे संविधान में संसद या विधानमंडल के प्रत्येक सदन को अध्यक्ष या सभापति के माध्यम से कुछ विशेषाधिकार दिए गए हैं ताकि वे सदन की उच्च गरिमा को बनाए रखें, अपने विधायी कार्यों को सुचारु रूप से सम्पन्न करा सकें, अपने सदस्यों को अनुशासित कर सकें, उनके अमर्यादित आचरण पर कार्यवाही कर सकें, अपने सदस्यों के अधिकारों की रक्षा कर सकें इत्यादि, इत्यादि। जैसे संविधान में संसद सदस्य को व्यक्तिगत विशेषाधिकार दिए गए हैं वैसे ही सदन को भी सामुहिक विशेषाधिकार दिए गए हैं जो संसद की प्रक्रिया को विनियमित करने वाले नियमों और स्थायी आदेशों के अधीन संसद द्वारा समय-समय पर बनाए जाते हैं तथा अनुमोदित किए जाते हैं।

पिछली संसद में तृणमूल कांग्रेस की महिला सांसद महुआ मोइत्रा पर आरोप लगा कि उसने एक अनधिकृत व्यक्ति, उद्योगपति दर्शन हीरानंदानी से पैसे और महंगे गिफ्ट लेकर उनके साथ अपना पार्लियामेंट लॉगिन आई.डी. और पासवर्ड शेयर किया जिससे उद्योगपति ने विदेश में बैठे-बैठे अपने कारोबारी प्रतियोगी गौतम अडानी तथा अडानी समूह के बारे में बड़ी संख्या में लोक सभा प्रश्न पूछे। इस मामले को लोक सभा की आचार संबंधी समिति को जाँच के लिए भेजा गया। समिति ने आरोपों की व्यापक जाँच की और संबंधित सदस्य को अनैतिक आचरण तथा सदन की अवमानना का दोषी पाया। समिति की सिफारिशों के आधार पर सदन ने महुआ मोइत्रा की सदस्यता समाप्त कर दी।

ऐसा ही एक मामला 2005 में हुआ था जिसे कैश फॉर क्वेरी के नाम से जाना जाता है। इसमें कोबरापोस्ट द्वारा स्टिंग ऑपरेशन किया गया था जिसमें 11 संसद सदस्यों को संसद में प्रश्न पूछने के लिए पैसे लेते हुए दिखाया गया था। इन सदस्यों में लोक सभा के 10 सदस्य शामिल थे और राज्यसभा का एक सदस्य। इस पर कार्यवाही करते हुए लोक सभा में नेता सदन द्वारा इन सबकी सदस्यता समाप्त करने के संबंध में एक प्रस्ताव पेश किया गया। सदन द्वारा प्रस्ताव पारित होने पर इन सभी की सदस्यता समाप्त कर दी गई। इसी प्रकार राज्यसभा द्वारा भी अपने उस एक सदस्य की सदस्यता समाप्त कर दी गई।

न्यायालय द्वारा की गई कार्यवाही का जहाँ तक प्रश्न है संसद सदस्यों और विधायकों के विरुद्ध ऐसे कई मामले न्यायालयों में लंबित हैं और उनपर सामान्य नागरिक की तरह कार्यवाही हो रही हैं। सदन के बाहर किसी सदस्य द्वारा किया गया कोई कृत्य अथवा उसके द्वारा कही गई किसी बात पर न्यायालय में कार्यवाही की जा सकती है उसमें उसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। मगर सदन के अंदर प्रत्येक सदस्य को कुछ विशेषाधिकार दिए गए हैं जो सामान्य नागरिकों को प्राप्त नहीं हैं।

संविधान के अनुच्छेद 105(2) के अंतर्गत संसद सदस्य को तथा अनुच्छेद 194(2) के अंतर्गत विधानमंडल के सदस्य को कुछ विशेषाधिकार दिए गए हैं ताकि वे विना किसी बाधा, दबाव और भय के स्वतंत्र रूप से अपने विधायी कार्यों का निर्वहन कर सकें। इसमें कहा गया है कि संसद के किसी सदस्य के विरुद्ध संसद या उसकी समिति में उसके द्वारा कही गई किसी बात या दिए गए मत के संबंध में किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी और कोई भी व्यक्ति संसद के किसी सदन द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन किसी रिपोर्ट, पत्र, मत या कार्यवाही के प्रकाशन के संबंध में इस प्रकार उत्तरदायी नहीं होगा अर्थात् उसके आधार पर संसद सदस्य पर कोई अदालती कार्यवाही नहीं की जा सकती, उससे उन्हें पूर्ण छूट प्राप्त है।

सदन में उनके दायित्वों के निर्वहन के संबंध में भी समय-समय पर हमारे सांसदों और विधयकों पर रिश्वतखोरी के आरोप लगते रहे हैं और वे अपने विशेषाधिकारों की आड़ में किसी प्रकार की अदालती कार्यवाही से बचने का प्रयास भी करते रहे हैं।

इसी कड़ी में सीता सोरेन, झारखंड मुक्ति मोर्चा की विधायक पर 2012 में कथित रूप से रिश्वत लेने का आरोप लगाया गया। एक निर्दलीय उम्मीदवार ने उनसे राज्यसभा चुनाव में अपने पक्ष में मतदान करने के लिए कथित तौर पर रिश्वत दी मगर सीता सोरेन ने ओपन बैलट सिस्टम में अपनी ही पार्टी के उम्मीदवार को वोट दिया।

मामला अदालत पहुँचा और सीता सोरेन के विरुद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अंतर्गत आपराधिक मामला दर्ज किया गया। सीता सोरेन आपराधिक मामले को रद्द कराने के लिए झारखंड उच्च न्यायालय पहुँची और वहाँ पर पी वी नरसिम्हा राव बनाम राज्य में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को आधार बनाकर आपराधिक मामले को रद्द करने की अपील की।

यहाँ पर यह बताना आवश्यक होगा कि पहले पी वी नरसिम्हा राव बनाम राज्य केस की पृष्ठभूमि और उसमें उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को भी समझा जाए। प्रधानमंत्री

पी वी नरसिम्हा राव की अल्पमत सरकार के खिलाफ 1993 में विपक्षी दलों द्वारा अविश्वास प्रस्ताव पेश किया गया। प्रस्ताव के खिलाफ मतदान करने के लिए झारखंड मुक्ति मोर्चा के सदस्यों तथा कुछ जनता दल के सदस्यों को रिश्वत दी गई। उनमें से ज्यादातर सदस्यों ने अविश्वास प्रस्ताव के खिलाफ मतदान किया तथा एक सदस्य ने मतदान से परहेज किया अर्थात् मतदान में भाग नहीं लिया। इस रिश्वत कांड में सदस्यों पर आपराधिक मामला दर्ज किया गया। अपने विशेषाधिकारों का हवाला देते हुए आरोपी सदस्यों का तर्क था कि सदन के अंदर उनके द्वारा दिए गए किसी मत के लिए उन्हें किसी अदालती कार्यवाही से छूट प्राप्त है।

यह मामला जब उच्चतम न्यायालय में पहुँचा तो पांच सदस्यीय संविधान पीठ ने (3:2) के बहुमत से निर्णय दिया कि अनुच्छेद 105(2) के तहत दी गई छूट उन सभी सदस्यों पर लागू होगी जिन्होंने मतदान किया था क्योंकि यह प्रावधान सदन में “क्या कहा गया है या क्या मतदान किया गया है'' की रक्षा करता है। बहुमत के फैसले में माना कि एक सांसद ''किसी ऐसी बात के लिए अदालत में जवाबदेह नहीं होगा जिसका संसद में उसके भाषण या मतदान से संबंध हो।” और जिन्होंने मतदान से परहेज किया अर्थात् मतदान में भाग नहीं लिया उन पर मुकदमा चलाया जा सकता है। अपने निर्णय में अदालत ने रिश्वत देने वालों के विरुद्ध भी आपराधिक मुकदमा चलाए जाने को कहा।

1998 में जब यह निर्णय आया तो आम जनता को भी बड़ा आश्चर्य हुआ था कि यह कैसा निर्णय है, जिसने रिश्वत ली और वोट दिया उस पर तो अदालत में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता और जिसने रिश्वत ली और वोट नहीं किया उस पर मुकदमा चलाया जा सकता है। पाँच-सदस्यीय खंडपीठ की मंशा शायद यही रही होगी कि संसद सदस्यों को सदन के भीतर जो विशेषाधिकार प्राप्त हैं उनमें कहीं अनावश्यक रूप से कोई न्यायिक हस्तक्षेप न बढ़ जाए और कहीं ऐसा न हो कि भविष्य में संसद में किए गए हर मतदान पर इस तरह के प्रश्न उठने शुरू हो जाएँ जिससे संसद की स्वायत्तता और उसकी मर्यादा पर विपरीत प्रभाव पड़े। न्यायालय की शायद यह भी मंशा रही होगी कि रिश्वत लेकर सदन के अंदर मत देने वाले सदस्यों के विरुद्ध सदन को स्वयं कार्यवाही करनी चाहिए। लेकिन यह कैसे संभव होता कि सरकार बचाने वाले सदस्यों के खिलाफ सत्तापक्ष क्यों कोई कार्यवाही करता। मगर आम लोगों की धारणा इससे एकदम विपरीत थी कि यह निर्णय हो न हो संसद सदस्यों को रिश्वत कांड में आपराधिक मुकदमे से बचाने के लिए किया गया है।

इसी निर्णय को आधार बनाकर सीता सोरेन ने झारखंड उच्च न्यायालय में आपराधिक मामले को ख़ारिज करने की अपील की।

झारखंड उच्च न्यायालय ने पी वी नरसिम्हा राव वाले केस को ही आधार बनाकर उसकी यह व्याख्या की कि यदि रिश्वत लेने वाला रिश्वत की शर्तों के अनुसार मतदान नहीं करता है तो वह विधायकों को दी गई प्रतिरक्षा की सुरक्षा खो देगा। न्यायमूर्ति ने उक्त फैसले की व्याख्या इस प्रकार की कि मतदान न करना और रिश्वत की शर्तों के अनुसार मतदान न करना, दोनों ही ऐसे उदाहरण हैं जहाँ रिश्वत और मतदान का एक-दूसरे से कोई संबंध नहीं है। इसलिए

सीता सोरेन जिन्होंने रिश्वत की शर्तों के अनुसार मतदान नहीं किया उन्हें अनुच्छेद 194(2) के अंतर्गत संरक्षण नहीं दिया जाएगा।

सीता सोरेन ने झारखंड उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील की। जब यह मामला उच्चतम न्यायालय के समक्ष आया तो प्रतिवादियों और कई हतक्षेपकर्ताओं की तरफ से पी वी नरसिम्हा राव बनाम राज्य में दिए गए निर्णय पर पुनर्विचार करने की अपील की गई। तीन न्यायाधीशों की पीठ ने माना कि उनके समक्ष यह प्रश्न ''पर्याप्त और सामान्य सार्वजनिक महत्त्व का है।" क्योंकि पहले दिया गया निर्णय पांच सदस्यीय संविधान पीठ का था, इसीलिए इस पर पुनर्विचार की सुनवाई उससे बड़ी संविधान पीठ द्वारा की जाए। तत्पश्चात, इस पर पुनर्विचार के लिए मुख्य न्यायाधीश डी वाई चंद्रचूड़ की अध्यक्षता में सात-सदस्यीय संविधान पीठ का गठन किया गया जिसमें अन्य न्यायाधीश थे -- न्यायमूर्ति ए.एस. बोपन्ना, न्यायमूर्ति एम.एम. सुंदरेश, न्यायमूर्ति पी.एस. नरसिम्हा, न्यायमूर्ति जे.बी. पारदीवाला, न्यायमूर्ति पी.वी. संजय कुमार तथा न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा।

उच्चतम न्यायालय में सीता सोरेन की तरफ से तर्क दिया गया कि पी वी नरसिम्हा राव बनाम राज्य का निर्णय एक सावधानीपूर्वक विचार किया गया और सुविचारित निर्णय था जिसमें कहा गया था कि सांसदों और विधायकों को सदन में सभी कार्यों के लिए पूर्ण संरक्षण प्राप्त है जबकि प्रतिवादियों और हस्तक्षेपकर्ताओं ने तर्क दिया कि विधायी प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने वालों को प्रतिरक्षा का आवरण नहीं दिया जा सकता। उनका यह भी तर्क था कि एक स्वस्थ लोकतंत्र में रिश्वत के लिए प्रतिरक्षा का कोई स्थान नहीं है।[1]

4 मार्च, 2024 को मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाली सात जजों की बेंच ने सर्वसम्मति से फैसला सुनाया कि रिश्वतखोरी के लिए संविधान के अनुच्छेद 105(2) और 194(2) के तहत सांसदों/विधायकों को संसदीय प्रतिरक्षा प्राप्त नहीं है। बेंच ने **पी.वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य** केस में अपनी ही संविधान पीठ द्वारा 1998 में बहुमत से दिए गए फैसले को ख़ारिज कर दिया गया। और इस प्रकार सीता सोरेन द्वारा उनके विरुद्ध आपराधिक मुकदमे को रद्द करने की अपील को भी ख़ारिज कर दी।

इस मामले पर बहस के दौरान उठने वाले अन्य विंदुओं पर भी बेंच ने अपने स्पष्टीकरण/निर्णय में इस प्रकार कहा --

बहस के दौरान कहा गया कि सीता सोरेन ने राज्यसभा सांसद चुनने के लिए सदन में नहीं बल्कि लॉबी में सीक्रेट बैलट से मतदान किया और उस समय विधानसभा सत्र भी नहीं चल रहा था, इसलिए उसे अनुच्छेद 194 के अंतर्गत प्रतिरक्षा नहीं दी जा सकती। मगर बेंच ने माना कि राष्ट्रपति चुनाव, उप-राष्ट्रपति चुनाव और राज्यसभा सदस्य का चुनाव करना निर्वाचित सांसद/विधायक का संविधानिक कर्त्तव्य है इसलिए उन्हें वहाँ प्रतिरक्षा की सुरक्षा प्राप्त है।

बेंच ने माना कि स्टेयर डेसिसिस का सिद्धांत (अदालतों को पिछले निर्णयों द्वारा निर्धारित क़ानूनी मिसाल का पालन करना) कोई ऐसा कठोर नियम नहीं है जिसे बदला नहीं जा सकता। इस न्यायालय की बड़ी संविधान बेंच किसी विशेष मामले में पुराने निर्णय, जो मिसाल बन

गए हों, को बदल सकती है। पी वी नरसिम्हा राव केस में रिश्वत लेकर मत देने वाले सदस्य को आपराधिक मामले से प्रतिरक्षा प्रदान की जिसका सार्वजनिक हित, सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी और संसदीय लोकतंत्र पर व्यापक प्रभाव पड़ा। अगर ऐसी त्रुटि को जारी रहने दिया गया और इस पर पुनर्विचार का निर्णय नहीं लिया गया तो इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं।

इस निर्णय में यह निर्धारित करने के लिए दो स्तरीय परीक्षण भी निर्धारित किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 105(2) और 194(2) के तहत किसी विधिनिर्माता को कब छूट दी जा सकती है। सबसे पहले जिस कार्य के लिए छूट का दावा किया जा रहा है वह सदन के सामुहिक कार्यों से संबंधित होना चाहिए। दूसरी मांगी गई छूट का किसी व्यक्तिगत विधिनिर्माता के कर्त्तव्य के निर्वहन से कार्यात्मक संबंध होना चाहिए।

अनुच्छेद 105 और 194 का उद्देश्य एक ऐसा वातावरण उपलब्ध कराना है जिसमें सदन के अंदर वाद विवाद और विचार विमर्श सुचारू और स्वतंत्र रूप से हो सके। परंतु जब उसके सदस्य रिश्वत लेकर बोलते हैं या मत देते हैं तो यह उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है।

रिश्वतखोरी को अनुच्छेद 105 और 194 के अंतर्गत प्रतिरक्षा नहीं दी जा सकती क्योंकि सदस्य जो रिश्वतखोरी में संलिप्त है उसने अपराध किया है फिर चाहे वह मत देता है या क्या कहता है इसका कोई अर्थ नहीं रह जाता। सदस्यों द्वारा भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी को समाप्त कर देगी।

रिश्वत लेने वाले सदस्य के विरुद्ध सक्षम न्यायालय द्वारा अपराधिक मामला शुरू करने तथा सदन द्वारा रिश्वत लेने वाले सदस्य पर अनुशासन तोड़ने के लिए की जाने वाली कार्यवाही दोनों बिल्कुल अलग मामले हैं जो एक-दूसरे के कार्यक्षेत्र को प्रभावित नहीं करेंगे।

रिश्वतखोरी का अपराध उसी समय पूरा हो जाता है जब सदस्य द्वारा रिश्वत स्वीकार कर ली जाती है। उसमें यह जरूरी नहीं कि उसके बाद सदस्य ने शर्तों के मुताबिक वोट दिया या नहीं।

न्यायालय ने यह भी पाया कि पी वी नरसिम्हा राव केस में विरोधाभास था जहाँ एक सदस्य को प्रतिरक्षा दी गई जब उसने रिश्वत ली और उसके अनुसार मत दिया। दूसरी तरफ एक सदस्य ने रिश्वत स्वीकार की परंतु अपनी स्वतंत्रता से मत दिया। अनुच्छेद 105 और 194 के मूलपाठ और उद्देश्य की यह व्याख्या अपने आप में ही विरोधाभासी है और पी वी नरसिम्हा राव मामले में दिया गया फैसला सदाचार के हित में नहीं था अतः उसका ख़ारिज होना उचित था।

❑

संदर्भ

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 105 और 194
2. पी.वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य मामला, उच्चतम न्यायालय, 1998

सन्तोष खन्ना (वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)

शून्य से शिखर तक दिव्यांगजन और दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्तमान में विश्व में एक अरब (एक बिलियन)से अधिक दिव्यांगजन है जिनमें से 20 प्रतिशत ऐसे लोग हैं जो गंभीर रूप से विकलांग है। इनमें बच्चे और व्यस्क, स्त्री और पुरुष, दोनों प्रकार के लोग हैं। हालांकि कि दिव्यांगता पर नियंत्रण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ और भिन्न-भिन्न देशों की सरकारें कई योजनाएँ लागू करती रहती हैं फिर भी दिव्यांगजनों की संख्या में कोई विशेष अंतर नहीं आता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार इसका एक कारण तो यह है कि अब मनुष्य की औसत आयु में वृद्धि होने से भी इस आँकड़े में वृद्धि होती रहती है। दूसरा, कई प्रकार के क्रॉनिक रोग भी इसका कारण हैं ।गरीबी के कारण भी लोग दिव्यांगता के शिकार हो जाते हैं क्योंकि गरीबी के कारण या तो कई बच्चे दिव्यांग के रूप में पैदा होते हैं अथवा जन्म के बाद के काल में अशुद्ध वातावरण में रहने के कारण वायरस के शिकार हो जाते हैं तथा ऐसे लोगों की गरीबी और अज्ञानता के कारण उपचार तथा जीवनोपयोगी सुविधाओं तक पहुँच नहीं हो पाती है जिससे अगर उन्हें विकलांगता संबंधित कोई रोग हो जाता है तो उपचार के अभाव में वह ठीक नहीं हो पाते हैं।

भारत में दिव्यांगजनों के अद्यतन आँकड़े उपलब्ध नहीं है क्योंकि कोरोना प्रकोप के कारण वर्ष 2021 की जनगणना नहीं की जा सकी और वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में दिव्यांगजनो की कुल संख्या 26.21 प्रतिशत रही।इस समय देश में दिव्यांगजनों की सही संख्या उपलब्ध नहीं हैं। वर्ष 2019-20 में भारतीय चिकित्सा अनुसंधान संस्थान के राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार दिव्यांगजनों की संख्या 63.25 मिलियन थी। भारत के संबंध में जो अब तक आँकड़े उपलब्ध है वह यह बताते हैं कि भारत में 121 करोड़ की आबादी में 2.68 करोड़ दिव्यांग है जो कुल जनसंख्या का 2.21 प्रतिशत है। दिव्यांगजनसंख्या में 56 प्रतिशत पुरुष और 44 प्रतिशत महिलाएँ हैं। कुल जनसंख्या में पुरुष और महिला जनसंख्या क्रमशः 51ः और 49 प्रतिशत है। इन आँकड़ों की गणना देश की 121 करोड़ आबादी के अनुसार है जबकि अब देश की जनसंख्या 140 करोड़ का आँकड़ा छू चुकी है और इस समय देश में कितने दिव्यांगजन होंगे, निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते हैं।

पर यह आधिकारिक तौर पर कहा जा सकता है कि भारत के संबंध में वर्ष 2014 एक ऐसा स्वर्णिम वर्ष था जब उसे पोलियो मुक्त देश घोषित किया गया था पोलियो वायरस के कारण भारत में कई लोगों को विकलांगता का दंश झेलना पड़ा था परंतु भारत सरकार ने समूचे देश में पल्स पोलियो और पोलियों वेक्सीन से बहुत बड़ी आबादी को इस वायरस से मुक्त कर दिया है। कहा जाता है कि पाकिस्तान और अफगानिस्तान जैसे देश अभी भी पोलियो से मुक्त नहीं हुए हैं। देश के पोलियो मुक्त होने से क्या यह आशा की जानी चाहिए कि देश में विकलांगता से व्यथित व्यक्तियों की संख्या में कमी आई होगी?

जिन परिवारों में दिव्यांजन होते हैं उनके दुःख और मुसीबतों का पारावार नहीं होता। उनके दुःख से परिवार जन की मानसिकता प्रभावित हुए बिना नहीं रहती।। मैं एक महिला से मिली तो नहीं पर फ़ोन पर बात होती है। उसका एक ही बेटा है जो स्पासटिक है। महिला भी नौकरी करती है। महिला ने बताया कि बेटे की देखभाल के लिए पति ने नौकरी छोड़ दी थी पर अब वह स्वयं कैंसर से पीड़ित हैं। फ़ोन पर उसे समझाती हूँ कि आफिस की बातों को लेकर अनावश्यक तनाव न रखें क्योंकि उसपर परिवार को संभालने की बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। पर उसे लगता है कि आफिस वाले उसके दुश्मन हैं और उसका हमेशा बुरा सोचते हैं और उसे पागल समझते हैं और भी बहुत कुछ। मैं उसे हर बात में नाकार से साकार की ओर मोड़ने का प्रयास करती हूँ, मेरी बातों से उसे तसल्ली तो मिलती है पर चारों तरफ नकार बने वातावरण के कारण उसकी मानसिकता बदलना बहुत कठिन है अर्थात् बच्चे की विकलांगता ने मानों उसे भी मानसिक रूप से इतना विचलित कर दिया है कि उसे अपने जीवन के अनेक साकार पक्ष नजर हीं नहीं आते। यह स्वाभाविक है जिसका युवा हो चुका बेटा स्पासटिक है, पति केंसर से पीड़ित हैं और उसे लगता है कि नौकरी में उसे जानबूझ कर प्रोमोशन नहीं दी जा रही है।

पोलियो के कारण अपंगता का एक और केस भी मैंने देखा है। मैं तीस पैंतीस वर्ष पहले की बात कर रही हूँ। कुरुक्षेत्र पहेवा से मेरे पति की मासी की बहन पोलियो ग्रस्त अपने दस-,बारह वर्षीय भाई को अपनी गोद में उठा कर कई बार दिल्ली आती थी। वह हमारे यहाँ रुकती थी और दिल्ली में जगह-जगह उसका उपचार कराती थी यहाँ तक कि एम्स हॉस्पिटल में भी उसका इलाज चलता रहा। कई वर्षो के इलाज के बाद भी वह ठीक नहीं हुआ और उसकी मृत्यु भी हो गई। इसी प्रकार, मेरी अपनी छोटी बहन की बेटी को बचपन में ही पोलियो का रोग हो गया था। वह ना तो उठ सकती थी ना खड़ी हो सकती थी उसके शरीर का पूरा बायाँ भाग पोलियो के कारण पैरालाइज्ड था। मेरी बहन कहती, बेटी का धन है, ऐसी स्थिति में उसका क्या होगा? उसके और भी छोटे-छोटे बच्चे थे पर उस समय उसका सारा ध्यान अपनी अपंग बेटी पर था। उसने उस बेटी का उपचार जगह-जगह जाकर कराया।

कई बार वह किसी अन्य शहर में उपचार के लगने वाले कैंप में ले जाती और वहाँ कितने-कितने दिन रुक कर उसके प्रभावित अंगों पर मालिश करती या तरह-तरह के और

उपचार करती किंतु वह प्रभावित अंग ठीक नहीं हुए।

उसके मामले में एक अच्छी बात यह हुई कि उसकी पढ़ाई बाद में जारी रही। एक बार जब वह आठवीं नौवीं कक्षा में थी तो उसे हमारे पास दिल्ली लाया गया।

हमने प्रयास कर रेड क्रॉस सोसाइटी से उसे व्हीलचेयर और बाद में उसे कैलिपर्स और वैसाखियाँ दिलवा दीं जिससे उसके जीवन में एक अच्छा गुणात्मक परिवर्तन आया कि वह केलीपर्स पहन बैशाखियों के सहारे खड़े हो चल कर व्हीलचेयर पर बैठ जाती और फिर एक हाथ से उसने व्हीलचेयर चलाना भी सीख लिया ।

उसने पूरा परिश्रम किया और अपनी पढ़ाई जारी रखी और बी.ए.बी. ऐड कर लिया। मेरे सहृदयशील पति उसकी हर तरह की सहायता करने के लिए तैयार रहते। उन्होंने दिल्ली में रह रहे अपनी बुआजी के बेटे से उसकी मदद करने का अनुरोध किया। बुआजी के बेटे डीएवी संस्था के अध्यक्ष थे और उन्होंने ही उसे उसके शहर में ही डी.ए.वी स्कूल में जॉब दिलवा दी जिससे अपंग समझे जाने वाली उस लड़की का आत्मविश्वास बहुत बढ़ गया और उसने अपनी नौकरी के साथ-साथ ए.एम. भी कर लिया और बाद में एक और एम,ए. भी कर लिया।

ऐसा नहीं कि डीएवी स्कूल में जॉब मिलने पर उसे संघर्ष नहीं करना पड़ा हो। यद्धपि आरंभ से ही अर्थात् उसे स्कूल में पहले दिन से ही बच्चों को पढ़ाने का काम दे दिया था और वह ब्लैकबोर्ड के साथ वैसाखियों के सहारे खड़ी हो बच्चों को पढ़ाने लगी थी लेकिन समाज में विकलांग व्यक्तियों के प्रति नकारात्मक मानसिकता के कारण स्कूल की प्रिंसिपल ने उसे रखा क्लर्क के रूप में और उसे क्लार्क का वेतन दिया जाने लगा और इसके लिए वह कहती कि अपंग लड़की है बच्चों को खड़ी हो कर पढ़ा नहीं सकती। इस बात का उस दिव्यांग लड़की को हमेशा मलाल और तनाव रहता कि यद्यपि वह अपंग होते हुए कैलिपर्स और बैसाखियों के सहारे स्कूल में अपने पहले दिन से बच्चों को खड़े होकर पढ़ा रही है फिर भी उसकी प्रिंसिपल उसे अध्यापक का दर्जा नहीं दे रही है। इस तरह उसे पढ़ाते पढ़ाते कई वर्ष बीत गए और ऐसे कई मौके आए जब उसे अध्यापक बनाया जा सकता था परंतु प्रिंसिपल ने उसे अध्यापक का दर्जा न देने की जैसे कसम खा ली थी इसलिए उसे अध्यापक ना बनाकर उसे हमेशा क्लर्क का ही वेतन दिया जाता रहा। अंततः बाद में दिल्ली से ही उसे कहलाया गया तो तब कहीं जाकर उसने उसे अध्यापक के रूप में रखा। इस प्रकार दिव्यांगजनों को परिवार और समाज का सहयोग मिलने में कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है। परंतु ऐसे लोगों को अनुकूल परिस्थितियाँ और सुविधाएँ मिलें तो वह भी समाज की एक उपयोगी इकाई सिद्ध हो सकते हैं जैसे कि मेरी बहिन की लड़की ने कर दिखाया है।

भारत मैं दिव्यांग व्यक्तियों के कल्याण के लिए समय-समय पर क़ानून बनाये जाते रहे हैं और उन के अधिकारों के बारे में जागृति लाने के लिए आंदोलन भी चलाएं जाते रहे हैं।। भारत की संसद ने वर्ष 1995 इों एक क़ानून बनाया था जिसका नाम विकलांग व्यक्ति (समान

अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम था जिसका अंग्रेजी नाम था -- [The Disabled Persons, Equal Opportunities, Protection of Rights and full Participationm Act, 1995].

इस क़ानून में विकलांग व्यक्तियों की विकलांगता को सात श्रेणियों में बांटा गया है और विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा और रोजगार में तीन प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है। यह क़ानून लगभग इक्कीस वर्ष तक देश में लागू रहा और वर्ष 2016 में इसके स्थान पर एक नया क़ानून आया। यह नया क़ानून संयुक्त राष्ट्र संघ के मार्गदर्शी सिद्धांतों के आधार पर बनाया गया है। वास्तव में संयुक्त राष्ट्र संघ की आम सभा ने 13 दिसंबर, 2006 को एक अभिसमय पारित कर विश्व के दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण के लिए कई प्रकार के प्रावधानों का प्रतिपादन किया था जिनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण प्रावधान थे --

1. दिव्यांगजनों को सम्मान के साथ और दूसरों के साथ समान रूप से गरिमा से जीवन जीने का अधिकार देना;
2. दिव्यांगजन के साथ भेदभाव न करना और समाज में उनकी पूरी भागीदारी सुनिश्चित करना;
3. दिव्यांगजनों को समाज में समान अवसर देना तथा उनकी सुविधाओं तक पहुँच सुनिश्चित करना;
4. दिव्यांगजन चाहे वह पुरुष अथवा स्त्री हो, उनके बीच किसी प्रकार का भेदभाव न करना तथा दिव्यांगजनों की बढ़ती हुई क्षमता का आदर करते हुए उनकी पहचान सुनिश्चित करना।

भारत की संसद में संयुक्त राष्ट्र संघ के दिव्यांगजनों के अधिकारों को सुनिश्चित करने संबंधी इस संकल्प की पुष्टि एक अक्टूबर, 2007 को कर दी थी परंतु भारत में उसके बाद भी काफी समय तक यहीं पुराना क़ानून विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों संबंधित अधिनियम 1995 ही लागू रहा। वैसे भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र संघ के इस संकल्प को क्रियान्वित करने के लिए नया क़ानून बनाने की प्रक्रिया पर कार्य 2010 में ही शुरू कर दिया था परंतु भारत की संसद में वर्ष 2016 में यह अधिकार अधिनियम बनाया जा सका जिसमें दिव्यांगजनों को काफी व्यापक अधिकार दिए गए हैं।

यह क़ानून भारत के संविधान में सभी व्यक्तियों को समानता, स्वतंत्रता, न्याय और गरिमामय जीवन संबंधी अधिकारों के अनुरूप बनाया गया है। यह क़ानून स्वयं में एक काफी विस्तृत क़ानून है जिसमें 17 अध्यायों के अंतर्गत 102 धाराएँ शामिल की गई हैं। पुराने अधिनियम में विकलांगता संबंधी केवल सात श्रेणियाँ थीं जिन्हें इस वर्तमान क़ानून में बढ़ाकर इक्कीस श्रेणियाँ कर दी गई हैं। इस क़ानून के अंतर्गत नियम बना कर इसे मार्च, 2017 से लागू किया गया है। घ्वर्ष 1995 के क़ानून का हिंदी में नाम विकलांग व्यक्ति अधिनियम था किंतु जब यह क़ानून बना जिसका अंग्रेजी में नाम था, 'Rights of Persons with

Disabilities Act, 2016 तो हमारे यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के सुझाव पर इसका हिंदी में नाम किया गया 'दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम।

वास्तव में वर्ष 1992 से विश्व भर में हर वर्ष तीन दिंसबर को अंतरराष्ट्रीय विकलांग दिवस मनाया जाता है। जब प्रधानमंत्री मोदी ने दिसंबर, 2015 मैं मन की बात के दौरान विकलांग शब्द के स्थान पर दिव्यांग शब्द का इस्तेमाल किया तो उनके सुझाये गए इस शब्द का सभी इस्तेमाल करने लगे हैं और जब भारत की संसद ने वर्ष 2016 में Rights of Persons with Disabilities Bill पारित किया तो उस विधेयक का हिंदी में ही नामकरण 'दिव्यांगजन अधिकार विधेयक किया गया जो इसी नाम से पारित हो क़ानून बन गया।

प्रायः लोग जिज्ञासु हो उठते हैं कि वस्तुतः 'विकलांग' और दिव्यांग शब्दों में अंतर क्या है तो कह सकते हैं कि क़ानूनी संदर्भ में तो यह दोनों शब्द परस्पर पर्यायवाची हो सकते हैं। किंतु इन के अंतर को समझने के लिए कहा जा सकता है कि जिसके हाथ न हों वह दिव्यांग है और जो हाथ होते हुए भी दूसरों की मदद के लिए ना उठे वह विकलांग है। जो व्यक्ति विकलांग हैं अगर समाज उनकी मदद करें और उसको बांछित सुविधाएँ उपलब्ध की जाए तो उसी विकलांग व्यक्ति का शरीर दिव्यांगता में तब्दील हो जाता है। उदाहरण के तौर पर मैं यह कहना चाहूँगी कि हाल में मैंने कपिल शर्मा शो में एक व्यक्ति को देखा जिसकी दोनों बाजू कंधों के नीचे तक नहीं थीं पर मुझे आश्चर्य तब हुआ जब उसने कपिल शर्मा, सिद्धू और सुनील के तीन नायाब चित्र मंच पर भेंट स्वरूप प्रस्तुत किए। उसके दोनों हाथ न होते हुए भी उसने इतनी खूबसूरत पैटिंग कैसे बना ली, पता नहीं। कुछ दिव्यांगजनों को पैरों की मदद से खूबसूरत पैटिंग बनाते देखा गया है। यही विकलांग व्यक्तियों में भी मनुष्य में दिव्यता की प्रस्तुति है। बस जरूरत इस बात की होती है कि इन दिव्यांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य सुविधाओं तक उनकी पहुँच सुनिश्चित की जाए। वर्तमान क़ानून की भूमिका इसीलिए महत्त्वपूर्ण हो उठती है कि इस क़ानून के माध्यम से सरकार ऐसे व्यक्तियों को उनके अधिकार देते हुए उन्हें ऐसी बाछित सुविधाएँ उपलब्ध कराती है और उनकी समाज में पूरी भागीदारी सुनिश्चित करती है कि उनकी विकलांगता दिव्यांगता में परिवर्तित हो जाती है और ऐसे व्यक्ति भी ऐसे ऐसे कारनामे कर उठते हैं कि देखने वाले दांतों तले उंगली दबाये देखते रह जाते हैं।

दिव्यांग जन की परिभाषा

दिव्यांग जन अधिकार अधिनियम, 2016 की उद्देशिका में यह कहा गया है कि दिव्यांगजनों के लिए समाज में गरिमापूर्ण जीवन जीने के लिए सुरक्षोपाय उपाय किए जाएँ और यह भी सुनिश्चित किया जाए कि उनके विरुद्ध किसी प्रकार का भेदभाव ना हो और वह समाज में ही रह सकें और समाज में उनकी पूरी भागीदारी हो। इसी अधिनियम में दिव्यांगजनों की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि ऐसा व्यक्ति दिव्यांगजन कहलाएगा जो दीर्घ समय से शारीरिक,

मानसिक, बौद्धिक अथवा संवेदी रुप से पीड़ित हो जिसके कारण समाज में उसका विकास पूरी तरह नहीं हो पाता है।

दिव्यांगता की श्रेणियाँ

जैसा कि उपर उल्लेख किया गया है कि पुराने क़ानून में दिव्यांगजनों की केवल सात श्रेणियाँ थी जिन्हें नये क़ानून में बढ़ा कर इक्कीस कर दिया गया है।

इसमें एसिड फैंकने से व्यथित व्यक्तियों को भी शामिल कर लिया गया है क्योंकि भारत में ऐसी घटनाओं में काफी वृद्धि हो रही है और ऐसिड की घटनाओं में जल जाने से बहुत सारे व्यथित व्यक्ति अपंग हो जाते हैं।

केंद्र सरकार के पास यह अधिकार है कि भविष्य में वह इन श्रेणियाँ में और प्रकार के व्यथित व्यक्तियों को सम्मिलित कर सकती है। वर्तमान में निम्नलिखित 21 प्रकार के दिव्यांगजनों की दिव्यांगता को इस सूची में शामिल किया गया है। यहाँ इनके बारे में जान लेना समीचीन होगा --

1. दृष्टिहीनता (Blindness)
2. दृष्टि-बाधिता (Low-vision)
3. कुष्ठ रोगी से मुक्त व्यक्ति (Leprosy Cured persons)
4. श्रवण विकार/दोष (Hearing Impairment / deaf and hard of hearing)
5. चलन संबंधी दिव्यांगता (Locomotory Disability)
6. बौनापन (Dwarfism)
7. बौद्धिक विकलांगता (Intellectual Disability)
8. मानसिक बीमारी (Mental Illness)
9. ऑटिज्म स्पेक्ट्रम (Autism Spectrum Disorder)
10. सेरेब्रल पाल्सी (Cerebral Palsy)
11. मस्क्युलर डिस्ट्राफी (Muscular Dystrophy)
12. पुरानी तंत्रिका संबंधी स्थितियाँ (Chronic Neurological conditions)
13. स्पेसिफिक लर्निंग विकलांगता (Specific Learning Disabilities)
14. मल्टीपल स्कलेरॉसिस (Multiple Sclerosis)
15. वाक् और भाषा विकलांगता (Speech and Language disability)
16. थैलेसीमिया (Thalassemia)
17. हीमोफीलिया (Hemophilia)
18. सिकल सेल रोग (Sickle Cell disease)
19. बहु-विकलांगता (multi disabilities diseases)

20. तेजाब हमले से प्रभावित (Acid attack victims)

21. पार्किन्संस रोग (Parkinson's Disease)

दिव्यांग जनों को क़ानूनी सुरक्षा

दिव्यांग जनों को इस प्रकार के अधिकार सुनिश्चित करने के लिए यह भी जरूरी हो जाता है कि उन्हें शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना, क्रूरता और शोषण से बचाया जाए। इन व्यक्तियों को यौन शोषण से भी बचाने की जरूरत होती है। इस संबंध में इस क़ानून में कई प्रावधान किए गए हैं। इस क़ानून में यह प्रावधान किया गया है कि सरकार दिव्यांगजन को प्रताड़ना, क्रूरता,अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार से बचाने के उपाय करेगी और अगर उनके विरुद्ध दुरुपयोग, हिंसा और शोषण आदि की घटना होती है तो उसके लिए उसे निशुल्क व विधिक सहायता प्रदान करेगी और इसकी सूचना संबंद्ध कार्यपालक मजिस्ट्रेट को दी जाएगी। दिव्यांगजनों के विरुद्ध ऐसी घटनाएँ होने पर उन्हें पुलिस अधिकारी द्वारा उनके निम्नलिखित अधिकारों के बारे में शिक्षित किया जाएगा --

1. वह संरक्षण के लिए आवेदन कर सकता है;
2. उसे निशुल्क विधिक सहायता मिल सकती है;
3. उसका पुनर्वास किया जा सकता है; और

यदि उसके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की किसी धारा के अंतर्गत कोई अपराध हुआ है तो उसकी शिकायत की जा सकती है।

दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 की धाराएँ 12, 13, 14 और 15 इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि कोई भी दिव्यांगजन न्याय प्राप्त करने के लिए किसी भी न्यायालय, न्यायाधिकरण, प्राधिकरण आयोग अथवा अन्य न्यायिक अथवा अर्द्ध-न्यायिक संस्था के द्वार खटखटा सकता है और उन्हें यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होगी कि उसकी विकलांगता का लाभ उठा कर उसके विरुद्ध कोई अपराध किया गया है।

अपराध के लिए दंड व्यवस्था

अधिनियम के मुताबिक यदि कोई व्यक्ति किसी विकलांगजन को सार्वजनिक तौर पर अपमानित करता है या अपमानित करने के ध्येय से कुछ कहता है तो उसे इस अपराध के लिए कारावास का दंड भी दिया जा सकता है।

इस तरह के अत्याचारों में क़ानून के तहत कारावास की सजा 6 महीने हैं, जिसे जुर्माने के साथ या बिना जुर्माने के 5 साल तक बढ़ाया जा सकता है। उल्लेखित अत्याचार हैं (ए) सार्वजनिक दृश्य में अपमानित करने के इरादे से जानबूझकर अपमान करना/धमकाना, (बी) विकलांग महिला का अपमान करने या उसका अपमान करने के इरादे से हमला करना, (सी) जानबूझकर किसी दिव्यांग को भोजन या तरल पदार्थ देने से इनकार करना, (डी) विकलांग महिला/बच्चे का यौन शोषण करना, (ई) स्वेच्छा से किसी अंग/इंद्रिय/पीडब्ल्यूडी के किसी भी

सहायक उपकरण को चोट पहुँचाना/क्षतिग्रस्त करना/हस्तक्षेप करना, और (एफ) किसी भी चिकित्सा प्रक्रिया को निष्पादित/संचालन/निर्देशित करना।

यह अधिनियम प्रत्येक जिले में विशेष अदालतें स्थापित करने का प्रावधान करता है। मानसिक विकलांगता वाले व्यक्ति के परिप्रेक्ष्य से इस धारा का निहितार्थ यह है कि उनके खिलाफ अत्याचार दंडनीय है।

अन्य प्रकार के घोर अपराधों के लिए छः महीने से ले कर पांच साल तक का कारावास और जुर्माना का दंड दिया सकता है।

त्वरित सुनवाई के लिए विशेष न्यायालय

दिव्यांग जनों से संबंधित अपराधों के लिए त्वरित सुनवाई के लिए राज्य के प्रत्येक जिले में विशेष न्यायालय बनाये जाएंगे। इसके लिए राज्य सरकार उस राज्य के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सलाह से ऐसे सत्र न्यायालय नामित किए जाएँगे और उसके लिए पब्लिक प्रोसिक्यूटर भी नामित किया जाएगा। अगर कोई व्यक्ति अथवा कोई कंपनी इस क़ानून के प्रावधानों का उल्लंघन करता है तो उसके विरुद्ध भी मुकदमा चलाया जाएगा।

यदि कोई व्यक्ति बेंचमार्क दिव्यांगजनों की सुविधाओं को धोखे से ले लेता है तो उसे 2 वर्ष तक का कारावास और एक लाख तक का जुर्माना लगाया जा सकता है।

दिव्यांग जनों के लिए आरक्षण

दिव्यांग जनों को सभी के समान समानता के अधिकार दिए जाने के साथ-साथ उच्च शिक्षा में पांच प्रतिशत का आरक्षण और रोजगार के लिए चार प्रतिशत का आरक्षण दिया गया है। यही नहीं, उनके लिए गरीबी उन्मूलन योजनाओं और भूमि आवंटन में भी चार प्रतिशत का आरक्षण का प्रावधान किया गया है। वैसे भी 6 से 18 साल तक के दिव्यांग बच्चों को निशुल्क शिक्षा का अधिकार है ही, दिव्यांगजनों की सरकारी एवं गैर सरकारी भवनों में पहुँच सुनिश्चित करने की व्यवस्था की जाएगी। भारत सरकार की नौकरियों में दिव्यांगता न्यूनतम 40 प्रतिशत होनी चाहिए, क़ानून के अनुसार इसे ही बैंचमार्क दिव्यांता की संज्ञा दी गई है।

सहायता के लिए निधि की स्थापना

दिव्यांग व्यक्तियों की सहायता के लिए केंद्रीय और राज्य-स्तरीय निधि का निर्माण किया जाएगा।

दिव्यांगजनों के लिए मुख्य आयुक्त

सरकार ने दिव्यांगजनों तक उनके अधिकार और सुविधाएँ सुलभ कराने के लिए अनेक प्राधिकरण बनाए हैं दिव्यांगजनों के लिए मुख्य आयुक्त का कार्यालय बनाया गया है इस आयुक्त की सहायता के लिए दो आयुक्त और होंगे और दिव्यांग क्षेत्र में विशेषज्ञों की 11-सदस्यों की

एक सलाहकार समिति भी होगी। मुख्य आयुक्त का कार्यालय केंद्रीय स्तर पर और राज्यों के स्तर पर भी बनाया जाएगा। यह संस्थाएँ अधिनियम के सुचारू क्रियान्वयन पर निगरानी रखेगी तथा सभी शिकायतों की सुनवाई कर उनका समाधान करेंगी।''

इस क़ानून को लागू हुए लगभग आठ वर्ष हो गए हैं और दिव्यांगजनों तक प्रायः वांछित सुविधाएँ पहुँच रही हैं और उनकी क्षमता को पहचान कर उन्हें आगे बढ़ने के अवसर भी दिए जा रहे हैं। इनमें से कई व्यक्ति खेलों के क्षेत्र में देश का नाम रोशन कर रहे हैं। कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि सबको सब मिल ही रहा है परंतु इस क़ानून से उनके जीवन में गुणात्मक अंतर तो आया है हालांकि संसद ने एक दो बार इस क़ानून में संशोधन भी किए हैं। परंतु इस क़ानून के प्रावधानों के प्रति जागृति लाने की भी आवश्यकता है। क़ानून नागरिकों के अधिकारों का सृजन करते हैं अतः जागृति अभियानों का बहुत बड़ा महत्त्व है।

❑

शोध आलेख आमंत्रित

अतीव प्रसन्नता का विषय है कि विधि भारती परिषद् की 'महिला विधि भारती' शोध पत्रिका का अंक 120 (जुलाई-सितंबर, 2024) के प्रकाशन के साथ पत्रिका के तीस वर्ष पूरे हो जाएँगे। यह अंक 120 विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जाएगा जिसका विषय होगा 'भारतीय लोकतंत्र के 75 वर्ष।' अतः सभी विषय विशेषज्ञ और चिंतकों से इस विषय के किसी पक्ष, आयाम आदि पर आलेख आमंत्रित किए जाते हैं। कृपया आलेख शीघ्रातिशीघ्र और 31 जुलाई, 2024 तक अवश्य भेज कर अनुगृहीत करें। आलेख में विधवत् संदर्भ देना ज़रूरी है।

-- प्रधान संपादक

डॉ. एस.एस. दास

धार्मिक सहिष्णुता एवं पंथनिरपेक्षता : भारतीय परिदृश्य में रामास्वामी उड़यार वाद का विवेचन

एक ग्राम सभा वी. कालाथुर जो कि तमिलनाडु के पेरंबलूर जनपद के वेप्पनथताई तालुक में आता है, इसी ग्राम की एक प्राचीन परंपरा के अनुपालन को लेकर पंथ निरपेक्षता पुनः संकट में आ गई। कालाथुर में हिंदू एवं मुस्लिम दोनों पर्याप्त संख्या में रहते हैं। प्रस्तुत संदर्भ में जनसंख्या विषयक (Demographic) विवेचन करना उचित नहीं होगा। यह स्वीकार्य तथ्य है कि दोनों समुदायों की पर्याप्त संख्या है। दोनों समुदायों के बीच अलिखित समझौता है, जिसके तहत कालाथुर गाँव के पश्चिमी भाग में अधिकांशतः हिंदू जनसंख्या का निवास है एवं पूर्व की ओर मुस्लिम आबादी रहती है। यह पुनर्वास (Rehabilitats) नया नहीं है, कौन देशीय था, और कौन विदेशी या प्रवासी यह भी विवाद बिंदु नहीं था। ना ही यह भारतीय संस्कृति में संपूर्ण भारत में कहीं पर भी था। परंतु मनभेद के बीज ब्रिटिश शासकों द्वारा डाले गए भेदभाव तो थे। अन्यथा भारत भूमि पर धार्मिक सहिष्णुता कभी भी परिचय की मोहताज नहीं रही है। यह स्वयंसिद्ध थी। सांस्कृतिक विभिन्नता, बहुलवाद या अनेकवाद भारतीय धरा की उर्वरता थी और है। जो सदैव फलती फूलती रही है। हमने कभी धार्मिक युद्ध नहीं लड़े हैं। हाँ, धर्म के संपोषण में अनेक युद्ध लड़े हैं, और सर्वस्व निछावर किया है, जो कि किसी इतिहासकार का मोहताज नहीं है। जबकि जिन आक्रांताओं ने भारत में राज किया, उन पाश्चात्य शासकों के मूल निवास स्थानों पर कई धर्म युद्ध लड़े गए। इसी क्रम में 18वीं शताब्दी में भी युद्ध लड़ा गया, जो कि 3 दशक तक चला उसी के पश्चात् "पंथ निरपेक्षता" की अवधारणा अस्तित्व में आई, जो कि राज्य एवं चर्च के सख्त विभाजन को दर्शाती है। सर्वप्रथम, सन् 1851 में "पंथ निरपेक्षता" (Secularism) शब्द का प्रयोग जॉर्ज जैकब होलीओक (George Jacob Holyoake) ने किया, वह एक अज्ञेयवादी एवं दार्शनिक एवं लेखक थे। वस्तुतः उसे राज्य के कार्य में चर्च के हस्तक्षेप से आपत्ति थी। इसी के पश्चात् राज्य की तटस्थता की अवधारणा (Doctrine of neutrality) फलने फूलने लगी। इसी क्रम में सर्वप्रथम, फ्रांस एवं अमेरिका ने पंथ निरपेक्षता को विधि के रूप में आत्मसात किया। जोकि कैथोलिक अनुयायियों का स्पष्ट विरोध था, सत्ता मे दखलअंदाजी करने के लिए, इसी क्रम में फ्रांस एवं अमेरिका में क्रांतियाँ भी हुई। उसके पश्चात् उन्हें स्वतंत्रता प्राप्त हुई एवं प्रजातंत्र की स्थापना हुई।

पंथ निरपेक्षता की विचारधारा को ब्रिटेन, फ्रांस एवं अमेरिका के विभिन्न विचारकों जैसे जॉन लॉक, थॉमस जेफरसन, जेम्स मैडिसन, बेंजामिन फ्रैंकलिन, जीन बाबरोट, डेरेक परफिट, सिंगर, चार्ल्र्स ब्रैडलाफ, कार्ल एल. वेकर, कार्ल लोविथ, हैंस ब्लूमेंबेर्ग, एमएच अब्राहम, पीटर एल बर्गर, डी एल मुंबी आदि। परंतु उपरोक्त विचारकों के मध्य में भी पंथ निरपेक्षता को लेकर मतभेद थे। एक समूह कठोर पंथ निरपेक्षता (Radical Secularism) की बात करता था, तो दूसरा उदार पंथ निरपेक्षता (Liberal Secularism) की बात करता था। प्रथम समूह राज्य की चर्च से पूर्ण तटस्थता की बात करता था, अर्थात् नास्त्यवादी (Agnostic approach) विचारधारा का समर्थक था। जबकि दूसरा वर्ग धर्म के प्रति सहिष्णु एवं उदार दृष्टिकोण रखता था अर्थात् सभी धर्मों/पंथों का समान आदर एवं संपोषण किए जाने में विश्वास रखता था।

यह उदारवादी विचारधारा अमेरिका एवं फ्रांस की विधियों में भी परिलक्षित हुई है। 19वीं एवं 20वीं सदी में संभवतः इसी भाव को सर्वाधिक प्रचार-प्रसार मिला एवं संभवतः इसी भाव को हमारे संविधान रचयिताओं ने भी आत्मसात किया होगा। इसी कारण उन्होंने पंथ निरपेक्षता शब्द में अत्यधिक साहित्य एवं स्वीकार्यता होने के बावजूद भी प्रत्यक्ष रूप से इस शब्द को संविधान में स्थान नहीं दिया। अगर दूसरे पहलू को परीक्षित करें तो यह भी संभव है कि 19वीं सदी में जब पंथ निरपेक्षता एवं धार्मिक सहिष्णुता की बात प्रारंभ हुई, तो उसके पीछे भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण भूमिका भी रही होगी क्योंकि 19वीं सदी तक संपूर्ण विश्व भारतीय संस्कृति एवं साहित्य से परिचित हो गया था। हाँ, यह अलग विषय है कि उन्होंने इसको अधिकांशतः स्वीकार नहीं किया। परंतु कुछ उदारवादी पाश्चात्य विचारकों ने भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के उद्धरण भी प्रस्तुत किए हैं। प्रस्तुत संदर्भ में मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि 'धार्मिक सहिष्णुता' (Religious harmony not tolerence) की भावना भारत भूमि से ही प्रसारित हुई होगी। इस विषय पर तथ्यात्मक गवेषणा अत्यंत आवश्यक है क्योंकि धार्मिक सहिष्णुता भारत के कण-कण में है। षड्यंत्र के रूप में या कि भारत को खंड-खंड करने के लिए विभाजन एवं शासन (Divide and rule policy) की नीति का स्थापन किया गया था। अन्यथा धर्म के नाम पर तो सहिष्णुता की नीति संपूर्ण मुगल काल में भी देखी जा सकती थी, जबकि अधिकांशतः मुगल शासकों द्वारा बर्बरतापूर्वक शासन किया गया। शासकों के विरुद्ध संपूर्ण देशीय धार्मिक विभिन्नता एवं सहिष्णुता के कारण ही उस क्लिष्ट समय में भी मुस्लिम कृष्ण भक्त, रहीम, रस खान आदि पैदा हुए। उसी काल में सूफी शाखाओं ने सनातन अद्वैतवाद, भक्ति मार्ग एवं प्रेम मार्ग का पर्याप्त सम्मान किया एवं उसे आत्मसात किया जो कि इस्लामिक कट्टरता के विरुद्ध था। अकबर के द्वारा दीन ए इलाही धर्म शुरू करना उसकी मजबूरी थी ना कि उदारता क्योंकि ऐसा करना भारतीय संस्कृति के अनुसार था, उसने यह अनुभव किया कि संस्कृति के अनुरूप चलने से ही सुचारू रूप से शासन किया जा सकता है।

थोड़ा-सा विषयान्तर हो गया, विश्लेषण से पहले वाद का तथ्यात्मक अवलोकन आवश्यक है। परंतु इस वाद के तथ्यों को मूल संस्कृति एवं उस पर कट्टरता के प्रहार से अलग नहीं

किया जा सकता है क्योंकि कुछ वर्ग जो कार्य एवं पद्धति (Modus operandi) स्वयं के लिए धार्मिक स्वतंत्रता का अंग मानते हैं। उसी कार्य पद्धति का अनुकरण दूसरे वर्ग के द्वारा किया जाना उन्हें नापसंद है। उसको सांप्रदायिकता का नाम दिया जाता है। इसी कारण पंथ निरपेक्षता एवं सहिष्णुता का सार्वकालिक परिदृश्य में मूल्यांकित किया जाना अति आवश्यक है।

जी हाँ, तमिलनाडु के कालाथुर का परिचय करा रहा था। भारत के धार्मिक आधार पर विभाजन होने के पश्चात् ही इस गाँव में भी पलायन तो नहीं हुआ, जिसको कुछ व्यक्ति विशेष वैकल्पिक निवास निर्णय (residing by choice) कहकर एहसान भी जताते हैं कि उन्हें मौका मिला था, जाने का, लेकिन आपसे (दूसरे वर्ग) से अत्यधिक प्रेम की वजह से नहीं गए। इसी कारण धार्मिक स्वतंत्रता अपंग होनी चाहिए, उन्हीं को मिलनी चाहिए बाकी लोग इसका प्रयोग करेंगे, तो वह सांप्रदायिकता में परिवर्तित हो जाएगी। 1951 से कालाथुर ग्राम सभा में शनैः-शनैः धार्मिक सहिष्णुता कमजोर होने लगी। वैमनस्यता को तो केवल बहाना चाहिए, इसी कारण विभिन्न अवसरों पर कालाथुर के दोनों वर्ग असहज होने लगे। दूसरा कारण बना, गाँव की ज़मीन का एक भूखंड (S.F. No119/1), जिसको लेकर मुस्लिम वर्ग भी चाहता था, कि यह भूखंड एक सार्वजनिक भूखंड (Common land) की तरह दोनों वर्गों द्वारा समान रूप से प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके समर्थन में उन्होंने संवैधानिक एवं अन्य विधियों का उल्लेख किया कि यह समानता के अधिकार के विरुद्ध है एवं पक्षपातपूर्ण है। इस भूखंड को पोरमबोक भूमि अर्थात् वह भूखंड जो राजस्व दायित्व से मुक्त है, एवं सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रण में है। परंतु हिंदू समुदाय का दावा है कि भूमि पोरमबोक (राजस्व दायित्व से मुक्त) है परंतु इस भूमि को हिंदू प्राचीन काल से ही धार्मिक प्रयोजनों के लिए सार्वजनिक भूमि के रूप में प्रयोग करते आए हैं। हिंदुओं का दावा यह था कि भूमि तो सार्वजनिक है, परंतु हिंदू समुदाय ही सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए उसका उपयोग करता रहा है। इसी बात को लेकर दोनों वर्गों में 1951 के बाद प्रायः झगड़ा हुआ एवं पुलिस शिकायतें भी दर्ज कराई गई जिसके परिणामस्वरूप कई बार पुलिस की उपस्थिति में धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन कराना पड़ा।

आखिरकार, 2019 में दोनों पक्षों द्वारा दो अलग-अलग याचिकाएँ मद्रास उच्च न्यायालय में संस्थित की गई। प्रथम याचिका में एक पक्ष ने मंदिर में धार्मिक आयोजन विधिपूर्वक करने की प्रार्थना की। दूसरी याचिका में मंदिर से धार्मिक जुलूस मुख्य मार्गों से निकालने पर प्रतिबंध लगाने की माँग की गई। न्यायालय ने धार्मिक आयोजनों को कुछ शर्तों के साथ अनुमति प्रदान की। दोनों समुदायों के झगड़ों को देखते हुए एवं शांति व्यवस्था स्थापित करने के लिए राजस्व संभाग अधिकारी (Revenue Devisional Officer) ने धार्मिक उत्सव की प्रमुख तिथियों पर धारा 144, दंड प्रक्रिया संहिता लागू कर दी जिससे शांति एवं व्यवस्था बनाई रखी जा सके। राजस्व अधिकारी के आदेश के विरुद्ध भी एक याचिका उच्च न्यायालय में दायर की गई थी। उसी एक तिथि (28 sept, 2018) पर याची ने ओरानी पोंगल विझा (Vorani pongal vigha) मनाने के लिए उप पुलिस निरीक्षक (Deputy suprentendent of police) को आवेदन किया।

उप-पुलिस निरीक्षक ने कुछ शर्तों के साथ ओरानी पोंगल विझा (एक विशेष धार्मिक उत्सव) के आयोजन की अनुमति दे दी, परंतु धार्मिक जुलूस निकालने पर कुछ पाबंदियाँ लगा दी। इन शर्तों में धार्मिक उत्सव मनाने के ढंग एवं तौर तरीकों पर भी कुछ निर्देश दिए गए जिससे दूसरे की धार्मिक भावनाओं को आहत ना किया जा सके। यहाँ पर आपको याद दिलाना आवश्यक है कि **ऊषाबेन बनाम भाग्य लक्ष्मी चित्र मंदिर के मामले** में उषाबेन ने जब न्यायालय को धार्मिक भावना आहत होने के आधार पर 'संतोषी माँ' फिल्म के प्रसारण पर रोक की माँग की, तो न्यायालय ने याचिका निरस्त करते हुए कहा कि आप स्वतंत्र हैं कि फिल्म ना देखें। जिससे आप की भावना आहत नहीं होगी। मेरे विचार से यह एक चयनशील निर्णय था। इस पर पुनर्विचार आवश्यक है। क्योंकि एक व्यक्ति (याची) फिल्म नहीं देखेगा फिर भी फिल्म के प्रसारण से उसकी धार्मिक भावनाओं को क्या नीचा दिखाया जा सकता है। जबकि विपरीततः कुछ समुदाय तो केवल फेसबुक पोस्ट के आधार पर विधायक गणों का घर जला देते हैं। और एक विशेष समुदाय की भावना ना आहत हो इसलिए दूसरे समुदाय के ऊपर ना केवल प्रशासनिक बल्कि न्यायिक निर्णयों के द्वारा सदैव धार्मिक भावनाओं को नियंत्रित किया जाता रहा है। क्या यह संविधान द्वारा प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार के अनुरूप है? इस प्रकार के नियंत्रण सर्वकालिक रहे हैं। इन निर्णयों का केवल आधार बहुसंख्यक होने का है। यहाँ पर समानता को नजरअंदाज किया जाता है। परंतु स्वाभाविक नियंत्रण स्वीकार करने की प्रवृत्ति उस समुदाय विशेष की ही, मेरे विश्लेषण का मूल विषय है। जिस पर उन्हें द्वेष नहीं होता। इसी को मैं धार्मिक सहिष्णुता के रूप में सिद्ध करने का प्रयास कर रहा हूँ जो कि धार्मिक सहिष्णुता के नाम पर नियंत्रित की जा सकती है, उसी को यदि पंथ निरपेक्षता की नवीन धारणा से बर्बर तरीके से नियंत्रित किया गया, तो दुष्परिणाम होंगे। क्योंकि यह भारतीय संस्कृति में उपस्थित नहीं रहा है। जबकि दूसरी धारणा को वे सदैव आत्मसात करते आए हैं। सरकारों को तो नियंत्रण करना है, एवं नियंत्रण दोनों स्थितियों में संभव है, तो जो तरीका सहजता से अपनाया जा सके। उसी को क्रियान्वित करना एवं कराना स्वस्थ न्यायपालिका एवं कार्यपालिका की निशानी है।

हाँ, तो मेरे कथानक मे उप पुलिस निरीक्षक ने स्वभावतः कुछ शर्ते धार्मिक जुलूस पर लगा दी थी, जानते थे कि इसे स्वीकार कर लिया जाएगा। परंतु इस बार ऐसा इसलिए भी नहीं हुआ क्योंकि प्रत्येक कार्यपालिका आदेश में जो शर्ते लगाई गई थी, वे अति प्राचीन परंपराओं को सीधे तौर पर बाधित करती थी। इसी कारण गाँव के मरियम्मन मंदिर में तीन दिवसीय परंपरागत धार्मिक आयोजन को धार्मिक जुलूस के साथ निर्बाद्ध रूप से संपादित कराने के लिए याचियों ने मद्रास उच्च न्यायालय से निर्देश जारी करने के लिए याचिकाएँ संस्थित की।

उक्त याचिकाओं को माननीय न्यायाधीश ने आदेश दिनांक 21-12-2018 के द्वारा विवादित प्रशासनिक आदेशों में कुछ संशोधित शर्तों के साथ निर्धारित कर दिया। उच्च न्यायालय के आदेश के विरुद्ध पुनः दो याचिकाएँ दोनों पक्षों द्वारा पृथक पृथक संस्थित की गई। याचिका

अपील संख्या 743 ऑफ 2019 को एम. रामास्वामी उडयार द्वारा संस्थित किया गया एवं याचिका अपील संख्या 2064 ऑफ 2019 सुन्नत वल जमात के द्वारा संस्थित किया गया। जब विवाद एक सदस्यी पीठ के समक्ष विचाराधीन था, तब उक्त न्यायाधीश ने पुनः एक बार धार्मिक सहिष्णुता के स्थापत्य मानकों को स्वाभाविक रूप से स्थापित करने का प्रयास भी किया। जिसका उल्लेख अति आवश्यक है। क्योंकि समाधान स्थापत्य मूल्य के स्वीकार्य करने में ही अंतोगतवा प्राप्त किया जा सकता है। एकल पीठ के न्यायाधीश ने धार्मिक सहिष्णुता को आधार मानकर एक विद्वान अधिवक्ता वी.लक्ष्मी. नारायण को मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया। उन्होंने दोनों पक्षों को प्राचीन परंपराओं को सहिष्णुता के आधार पर कार्यान्वित कराने का प्रयास किया। मुस्लिम पक्ष ने दलील रखी कि उन्हें न्यायालय से ही मामले का निर्णय चाहिए इसलिए यह प्रयास भी सफल ना रहा। अंततः एकल पीठ ने 21 सितंबर, 2018 को कुछ शर्तों के साथ धार्मिक जुलूस एवं उत्सव पुलिस संरक्षण में आयोजित करने का आदेश पारित कर दिया। उपर्युक्त शर्तो में एक शर्त यह भी थी कि जब जब धार्मिक जुलूस गाँव के मुख्य रास्ते से होते हुए जाएगा तब हल्दी का छिड़काव (जो कि धार्मिक रीति रिवाज का अंग था)नहीं किया जाएग। क्योंकि इससे मुख्य रास्ते में पड़ने वाली मुस्लिम बस्ती की भावनाएँ आहत होंगी। ऐसा मुस्लिम पक्ष की तरफ से दलील भी दी गई थी। धार्मिक उत्सव एवं जुलूस 3 दिनों के लिए था। तीसरे दिन के लिए पूर्व प्रतिबंध लगाया गया था।

एकल पीठ के आदेश को अपील में चुनौती दी गई। अपील आर्थी की तरफ से दलील दी गई कि सार्वजनिक मुख्य मार्ग को धार्मिक जुलूस एवं उत्सव निकालने से केवल इस वजह से भी नहीं रोका जा सकता क्योंकि मार्ग के किनारे निवास करने वाले कुछ लोगों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचती है। जो कि पंथ निरपेक्षता की भावना को भी नष्ट करता है। अपील आर्थी की तरफ से पूर्व निर्धारित मोहम्मद गनी बनाम पुलिस निरीक्षक, पूजा समिति फुलवरिया बनाम राज्य एवं चंदू साजन पाटिल बनाम केहलचंद बनाम पनामचंद के मामलों का उदाहरण भी दिया गया। इन वादों में धार्मिक आयोजनों को धार्मिक स्वतंत्रता का अंग माना गया था। इसके विपरीत दूसरे पक्ष ने दलील दी कि न्यायाधीश ने प्रथम एवं दूसरे दिन धार्मिक जुलूस निकालने की अनुमति देकर भूल की है जिससे गाँव में शांति एवं व्यवस्था भंग होने की आशंका है। उनकी दलील थी कि उत्सव मंदिर प्रांगण में ही किया जाए। जुलूस निकालने की अनुमति पंथ निरपेक्षता की भावना को आहत करती है। हाँ, इस समय यह उल्लेखित करना आवश्यक होगा कि जगदीश्वरानंद बनाम पुलिस कमिश्नर कलकत्ता में भी आनंद मार्गीयों के जुलूस को इसी आधार पर रोका गया था कि शांति एवं व्यवस्था भंग हो जाएगी। परंतु इसके विपरीत यह उल्लेख करना आवश्यक नहीं है कि प्रायः कई उच्च्य न्यायालयों ने मुहर्रम के जुलूस एवं ईद आदि की नमाजों को सार्वजनिक स्थल पर मनाने की अनुमति दी है। उन संदर्भों में पंथ निरपेक्षता संभवतः आहत नहीं होती होगी। यह सत्य है क्योंकि उन उद्धर्णो में धार्मिक सहिष्णुता ने एक कदम आगे बढ़कर पंथ निरपेक्षता की सूखी परिभाषा को पल्लवित एवं सुशोभित किया।

परंतु इस विवाद की जड़ यह है कि इस मामले में हिंदू वर्ग ने भी धार्मिक सहिष्णुता के आधार पर सार्वजनिक मार्ग के प्रयोग की अनुमति लेनी चाही। क्योंकि न ही पंथ निरपेक्षता और न ही धार्मिक सहिष्णुता चयनशील हो सकती है। अगर कोई भी विचारधारा चयनशील है तो वह सभ्य समाज में विकास का आधार तो नहीं बन सकती है।

सन् 2012 के पूर्व सभी मुख्य मार्गों से विधिवत धार्मिक जुलूस निकाला जाता था। किसी भी प्रकार का प्रतिबंध नहीं था। परंतु 2012 में नत्तार बाशा (W.P. No. 23484) ने एक याचिका धार्मिक जुलूस पर पूर्णतः रोक लगाने के लिए दाखिल की एवं दूसरी 2015 में जामा मस्जिद सुन्नत वल द्वारा दाखिल की गई। इन दोनों याचिकाओं में भी पूर्ण प्रतिबंध नहीं लगाया गया। परंतु पुलिस के संरक्षण में सभी मुख्य मार्गों पर जुलूस की अनुमति दी गई। इन्हीं याचिकाओं के निर्णयों में सर्वप्रथम, धार्मिक जुलूस पर कुछ शर्तें (समय एवं रीति रिवाज संबंधित) लगाई गई। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्थापत्य प्रथा के अनुसार धार्मिक रीतियों के द्वारा जुलूस निकालने की अनुमति 2012 से 2015 के बीच में भी उच्च न्यायालय द्वारा दी गई। उपरोक्त दोनों याचिकाओं में माननीय उच्च न्यायालय ने प्रथमतः 2012 में एवम पुनः 2015 में यह स्वीकार किया कि कालाथुर में कई दशकों से गाँव के चारों प्रसिद्ध मंदिरों के लिए धार्मिक जुलूस सभी मुख्य मार्गों से निकाले जाते रहे हैं। यह कोई नई प्रथा कालाथुर गाँव में नहीं थी। यह पाया गया कि सन् 2012 से मुस्लिम वर्ग ने धार्मिक जुलूस को लेकर न्यायालयी आपत्तियाँ शुरू की। परंतु न्यायालय ने इसे स्वीकार नहीं किया। हालाँकि जुलूस के समय के संदर्भ में एवं पुलिस व्यवस्था के संदर्भ में निर्देश अवश्य दिए थे। जिससे शांति व्यवस्था बनाई जा सके। उच्च न्यायालय ने द डिस्ट्रिक्ट म्युनिसिपालिटीज एक्ट 1920 का उद्धरण देते हुए उल्लेखित किया कि इस अधिनियम की धारा 180। सभी व्यक्तियों को बिना धर्म जाति या वंश के भेदभाव के मार्गों के प्रयोग की अनुमति प्रदान करती है। अगर किसी वर्ग विशेष के, किसी सार्वजनिक मार्ग के, उपयोग को इस आधार पर प्रतिबंधित कर दिया जाए कि उस मार्ग के किनारे बाहुल्य में अन्य धर्म के अनुयाई निवास करते हैं एवं उन्हीं का आधिपत्य मुख्य मार्ग के दोनों तरफ है। इसी कारण अन्य धर्म अनुयाई कोई गतिविधि धार्मिक या अन्य संचालित नहीं कर सकते तो यह न्याय सम्मत नहीं होगा। यदि ऐसा किया गया तो 1 दिन ऐसा आएगा कि सार्वजनिक मार्ग के किनारे रहने वाले विशेष वर्ग के लोग दूसरे समुदाय के लोगों को उस सार्वजनिक मार्ग को अन्य कार्यों के लिए भी प्रयोग करने से मना कर देंगे। यहाँ तक कि वैवाहिक समारोह एवं मृत्यु संस्कार से संबंधित जुलूस, आवागमन एवं यातायात बंद कर दिया जाएगा।जो कि संपूर्ण भारतीय समाज के लिए उचित नहीं होगा।

कालाथुर गाँव के सभी मंदिर एवं धार्मिक आयोजन दशकों पुराने हैं। माननीय उच्चतम न्यायालय ने गुलाम अब्बास बनाम उत्तर प्रदेश के वाद में स्पष्ट किया गया है कि धार्मिक विश्वास एवं रीति-रिवाजों का अनुकरण, प्रथाओं का पालन भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25 एवं 26 द्वारा संरक्षित मूल अधिकार का अंग है जिसको बाधित नहीं किया जा सकता। पुलिस

कमिश्नर बनाम आचार्य जगदीश्वरानंद अवधूत में भी उच्चतम न्यायालय ने स्वीकार किया कि अनुच्छेद 25 एवं 26 का विस्तार धार्मिक रीति रिवाज, उत्सवों एवं पूजा पद्धति पर भी है। लक्ष्मींद्र तीर्थ स्वामीयर श्री शिरूर मठ के वाद में भी इसी मत का अनुसरण किया गया था। सैफउद्दीन बनाम बांबेराज्य एवं सेशाम्मल बनाम तमिलनाडु राज्य के मामलों में न्यायालय ने अवधारित किया कि चाहे रीति रिवाज का कोई भाग धर्म का अभिन्न अंग है या कि नहीं परंतु यदि उनका अनुसरण प्राचीन काल से किया जाता रहा है तो उन्हें अनुच्छेद 25 का संरक्षण दिया जाएगा। केवल कुछ वर्षों से विशेषकर 2012 से अन्य धर्मानुयायियों को यदि धार्मिक जुलूस निकालना अच्छा नहीं लगता है तो केवल इसी आधार पर प्राचीन धार्मिक जुलूस जोकि कालाथुर गाँव की वार्षिक सौहार्दता एवं सहिष्णुता को स्थापित करने का आधार रहा है, बाधित करना एवं आयक्तियुक्त शर्तों को थोपना आधुनिक उदार पंथ निरपेक्षता (non radical liberal secularism) का भाग नहीं हो सकता। भारतीय संस्कृति में यह सर्वसिद्ध रहा है कि धर्म एवं राज्य को पृथक नहीं किया जा सकता। जिसको की 19वीं सदी में प्रारंभ हुई पाश्चात्य बहस ने भी बीसवीं सदी के मध्य तक स्वीकार कर लिया। वर्तमान में पाश्चात्य देश भी सभी धर्मों के सामान्य प्रश्रय पर ध्यान देते हैं, न कि धर्म से पृथकता या दूरी बनाने पर, जो कि सत्यतः एवं व्यवहारतः संभव ही नहीं है, ना ही था।

मोहम्मद गनी बनाम पुलिस उप निरीक्षक के मामले में खंडपीठ न्यायालय ने निर्धारित किया कि भारत एक स्वतंत्र लोकतांत्रिक एवं पंथनिरपेक्ष राष्ट्र है। भारतीय संविधान सभी धर्मों, जातियों एवं समुदायों के साथ सामान्य व्यवहार करता है। सभी संस्थाएँ अपने रीति-रिवाजों के अनुसार व्यवहार करने के लिए स्वतंत्र हैं। उन्हें अनुच्छेद 14 एवं 25 संरक्षित करते हैं। यह देश किसी एक धर्म का नहीं है बल्कि सभी धर्मों एवं मान्यताओं को समान रूप से मानता है एवं प्रश्रय देता है। बहुलवाद एवं विविधता भारतीय संस्कृति का सौंदर्य है। सकारात्मक पंथीनिरपेक्षता (हालाँकि मैं इसको भारतीय धार्मिक पंथ सापेक्षता कहना उचित समझूंगा या कि दूसरे शब्दों में धार्मिक सहिष्णुता) हमारी संस्कृति का अंग है। जिसका भाव सभी धर्मों का समान आदर है। जो कि सम्राट अशोक एवं अकबर आदि के द्वारा समय-समय पर अनुमोदित की जाती रही है। यह प्रारंभिक पाश्चात्य पंथ निरपेक्षता (19वीं सदी) की भांति नहीं है। जो कि राज्य एवं चर्च के पृथकता की बात करती हो।

उपर्युक्त वाद उद्धरणों को संदर्भित करते हुए विद्वान न्यायाधीश ने अवधारित किया कि धार्मिक जुलूस को प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है। प्रथम दोनों दिवसों पर 2015 तक चली आ रही परंपरा के अनुसार जुलूस मंदिरों तक सभी मुख्य मार्गों पर होते हुए निकाला जा सकता है एवं तीसरे दिन के जुलूस के संदर्भ में याची ने स्वयं हल्दी के छिड़काव की परंपरा को ना करने की स्वीकृति दे दी है। इस कारण तीसरे दिन के धार्मिक जुलूस को नहीं निकालना स्वीकार है। यही धार्मिक सहिष्णुता का उदाहरण है।दूसरे पक्ष ने असहनशीलता की दलील रखी, जिसको लेकर राज्य का कर्त्तव्य है कि प्रत्येक पक्ष की सहनशीलता को कायम

किया जाए एवं शांतिपूर्ण आयोजन हेतु समुचित पुलिस व्यवस्था पहले की तरह की जाए। जिससे दोनों समुदायों में सौहार्द बना रह सके।

उच्च न्यायालय ने डिस्ट्रिक्ट म्युनिसिपालिटीज एक्ट 1920 की धारा 180ए को संदर्भित करते हुए अभिव्यक्त किया कि भारतवर्ष में सभी सार्वजनिक मार्ग भी पंथनिरपेक्ष है जो कि संवैधानिक भावना को संपोषित करते हैं, और सभी व्यक्ति एवं समुदाय के द्वारा समान रूप से प्रयोग किए जा सकते हैं। बिना किसी अवरोध के धार्मिक जुलूस सार्वजनिक मार्ग पर निकालना मूल अधिकार का अभिन्न अंग है। जब तक वह विधि एवं व्यवस्था को भंग ना करता हो। नैतिकता के विरुद्ध न हो या किसी के स्वास्थ्य के प्रति हानिकारक ना हो। इस वाद में ऐसा कुछ भी नहीं है। इसलिए कालाथुर के हिंदू समुदाय को रीति रिवाज के अनुसार जुलूस निकालना, उनका मूल अधिकार है। हिंदू समुदाय ने जितने भी स्वनियंत्रित प्रतिबंध 2012 के बाद लगा रखे हैं वे ही भारतीय संस्कृति की धार्मिक सहिष्णुता के मूल स्रोत हैं। धार्मिक जुलूस को केवल इस आधार पर की किसी मार्ग विशेष पर दूसरे समुदाय के लोग बहुसंख्यक रूप में रहते हैं, रोकना सर्वथा उचित नहीं है।

इस निर्णय का विश्लेषण मैं श्री लक्ष्मी कांत मित्र जी के उद्बोधन के द्वारा समाप्त करना चाहता हूँ, जिन्होंने 6 दिसंबर, 1948 को संविधान सभा में कहा कि 'पंथनिरपेक्ष राज्य' का मतलब है कि राज्य किसी धर्म या समुदाय के आधार पर किसी व्यक्ति के धार्मिक विश्वास के साथ विभेद नहीं करेगा। राज्य किसी विशेष धर्म को स्थापित करने, संरक्षित करने एवं संपोषित करने का असमान रूप से प्रयास भी नहीं करेगा। कोई व्यक्ति या समुदाय धर्म के नाम पर विशेष दर्जे का अधिकारी नहीं है। राज्य सभी धर्मों का समान रूप से आदर करेगा। यही हमारी संस्कृति भी है।

एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति

-- ऋग्वेद 1-164.41

"There is only truth (or true being) and learned
person call it by many names"

❑

संदर्भ

1. A Secular Age, by C Taylor, Harvard University Press, 28 September 2007
2. Chandu Sajan Patil And Others Vs. Kyahalchand Panamchand And Others Reported In CDJ BHC 009.
3. Freedom of Religion and the Secular State, by Russell Blackford Published by Wiley. Blackwell, February 7th 2012
4. Gulam Abbas Vs. State Of Uttar Pradesh And Others Reported In AIR 1981 SC 218

5. H.R.E. V. Sri Lakshmindra Thirtha Swamiar Of Sri Shirur Mutt [AIR 1954 SC 282 : 1954 SCR 1005] ,
6. Mohamed Gani Vs. The Superintendent Of Police And Others Reported In CDJ 2005 MHC 1276.
7. Mohammed Gani Vs. The Superintendent Of Police & Others Reported In CDJ 2005 MHC 1276
8. Pooja Samiti, Fulwaria Vs. State Reported In CDJ 1985 Bihar HC
9. Rigveda(http://www.holybooks.com/rig-veda/)
10. Sardar Syedna Taher Saifuddin Saheb V. State Of Bombay [AIR 1962 SC 853 : 1962 Supp (2) SCR 496]
11. Secularism: A very short introduction by Andrew Copson Oxford University Publication 2017
12. Seshammal V. State of T.N. [(1972) 2 SCC 11: AIR 1972 SC 1586]
13. Shorter Constitution of India by Durga Das Basu, Vol-I,15 th edition 2018, Lexis Nexis
14. The Commissioner of Police And Others Vs. Acharya Jagdishwarananda Avadhuta and Another Reported In 2004 (12) SCC 770
15. The Constituent Assembly Debate Vol. VII, Sixth Reprint 2014, Lok Sabha Secretariat, New Delhi
16. The Constitution of India 1950
17. The District Municipalities Act 1920
18. Ushaben Navinchandra Trivedi & amp; Others. Vs Bhagyalaxmi Chitra Mandir & Others., AIR 1978 Guj 13,
19. W.A. No. 2064 Of 2019 Sunnath Val Jamath V. Kalathur, Perambalur District, Vs. Ramasamy Udayar, and; Others.
20. W.A. No.743 Of 2019 Ramasamy Udayar, Vs The District Collector, Perambalur District, Perambalur and; Others.
21. W.P. No. 23487 Of 2012 By A. Nattar Basha
22. W.P. No. 33288 Of 2015 By Jamma Masjid Sunnath Val

(रामास्वामी उदयार के विशेष संदर्भ में भारतीय संदर्भ में धार्मिक सहिष्णुता और धर्मनिरपेक्षता वी। जिला कलेक्टर, तमिलनाडु का पेरम्बलूर जिला)

नेहा राठी

स्त्रीधन किसका?

स्त्रीधन की अवधारणा हिंदू विधि की एक ऐसी अवधारणा है जिससे सामान्यतः परिचित तो सभी हैं किंतु लोगों में इस विषय की गहन जानकारी अमूमन कम ही देखने को मिलती है। ऐसा इसलिए भी है कि उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय ने स्त्रीधन का अलग अलग समय पर अलग अलग निर्वचन किया है। साथ ही इसका एक कारण यह भी है कि लोग स्त्रीधन, दहेज और उपहार को एक ही मान लेते हैं। कुछ लोग दहेज को स्त्रीधन मान लेते हैं और कुछ लोग दहेज के केवल उस हिस्से को स्त्रीधन मानते हैं जो महिला को उसके प्रयोग के लिए मिला है।

स्त्रीधन दो शब्दों 'स्त्री' और 'धन' से मिलकर बना है जिसका सीधा-सा अर्थ है स्त्री का धन अर्थात् उसकी संपत्ति। किसी महिला को उसके उपयोग के लिए उसके पीहर पक्ष और ससुराल पक्ष से मिलने वाला सामान उसका 'स्त्रीधन' होता है। ध्यातव्य है कि केवल पीहर और ससुराल पक्ष से मिले उपहार ही नहीं बल्कि यदि किसी महिला को दोस्तों या रिश्तेदारों की ओर से भी कोई उपहार मिला है तो यह भी स्त्रीधन की श्रेणी में आता है। स्त्रीधन के विषय में एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि किसी भी महिला को अपना स्त्रीधन अपने पास रखने का अधिकार होता है। बल्कि यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि स्त्रीधन पर केवल और केवल उस महिला का ही अधिकार होता है जिसका वह स्त्रीधन होता है और यदि कोई व्यक्ति किसी महिला का स्त्रीधन अपने पास रख ले और उसको न दे तो यह भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के अंतर्गत दंडनीय अपराध है।

स्त्रीधन का दायरा

आम धारणा है कि महिला को उसकी शादी के समय मिले उपहार, जेवर आदि ही उसका स्त्रीधन होता है किंतु गौरतलब है कि स्त्रीधन का दायरा इससे कहीं अधिक है। स्त्रीधन में उन सभी चीजों को शामिल किया जाता है जो उन्हें बचपन से मिलती हैं। इसमें छोटे-मोटे उपहार से लेकर सोना, सेविंग्स और महिलाओं को मिली संपत्ति इत्यादि भी शामिल होती है। ''सदियों पुरानी स्मृतियों और हिंदू क़ानून के सभी पुराने विद्यालयों जैसे दयाभागा, मिताक्षरा आदि के अनुसार, एक महिला के हाथ में स्त्रीधन निम्नलिखित था, चाहे वह युवती हो, विवाहित महिला हो या विधवा हो ।

1. विवाह अग्नि से पहले एक महिला को दिए गए उपहार।

2. दुल्हन की बारात में एक महिला को दिए गए उपहार

3. ससुर, सास द्वारा प्यार के प्रतीक के रूप में दिए गए उपहार

4. पिता, माता और भाई द्वारा दिए गए उपहार।[1]

किंतु इसे पूरी सूची नहीं माना जा सकता। उपरोक्त घटकों के अतिरिक्त युवावस्था, विवाह यहाँ तक कि वैधव्य के दौरान रिश्तेदारों से प्राप्त उपहार और वसीयत भी स्त्रीधन के दायरे में आती है। यदि किसी महिला को उसके मायके की ओर से, उसकी शादी के दौरान या फिर उसके वैधव्य के दौरान किसी विभाजन को प्रभावी बनाने के लिए संपत्ति में कोई हिस्सा दिया जाता है तो वह भी स्त्रीधन के दायरे में आता है। अतः एक विवाहित महिला को अपने मायके और ससुराल पक्ष के संबंधों से मिलने वाले उपहार किसी अजनबी से प्राप्त उपहार और स्व परिश्रम द्वारा अर्जित की गई संपत्ति भी उसके स्त्रीधन के दायरे में आती है।"स्त्रीधन प्राप्त करने के लिए हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 के अनुसार एक महिला द्वारा निम्नलिखित स्रोतों से प्राप्त संपत्ति उसकी पूर्ण संपत्ति है

उपहार (अचल और चल दोनों)। यह शायद उसकी शादी से पहले, दौरान प्राप्त हुआ होगा

शादी और शादी के बाद

पारिवारिक संपत्ति के बंटवारे के दौरान उसे विशेष हिस्से के रूप में संपत्ति प्राप्त हुई

किसी भी समझौते के प्रतिफल के रूप में उसे प्राप्त संपत्ति।

सेवा, व्यवसाय, व्यवसाय आदि द्वारा अर्जित एवं संचित की गई संपत्ति।

भरण-पोषण के बदले प्राप्त संपत्ति

स्त्रीधन से खरीदी गई संपत्ति

महिला को विरासत में मिली संपत्ति

किसी अन्य तरीके से अर्जित की गई संपत्ति -- किसी डिक्री या पुरस्कार के तहत या प्रतिकूल कब्ज़े के माध्यम से प्राप्त संपत्ति[2]

दहेज और स्त्रीधन में अंतर

'दहेज' और 'स्त्रीधन' शब्दों को लेकर कुछ हद तक भ्रम है। शादी के समय शादीशुदा जोड़े को माँगस्वरूप दिए जाने वाले उपहार को दहेज कहा जाता है दूसरी ओर स्त्रीधन में दी गईं चींजे किसी महिला को स्वैच्छिक रूप से दिया गया उपहार होता है। निष्कर्ष यह है कि सभी प्रकार के स्त्रीधन उसे उपहार के माध्यम से और बिना किसी माँग, अनुचित प्रभाव या यहाँ तक कि दबाव के दी गई संपत्तियाँ हैं जबकि दहेज में माँग, दबाव आदि जैसे घटक शामिल होते है।

कैलाशवती बनाम अयोध्या प्रकाश के मामले में न्यायालय ने स्त्रीधन और दहेज के बीच अंतर को पहचानते हुए, दोनों शब्दों का परस्पर उपयोग किया कर राय प्रकट की है कि --

"दहेज निषेध अधिनियम, 1961 शादी के समय या उसके आसपास पारंपरिक उपहार देने पर रोक नहीं लगाता है। इसलिए माता-पिता द्वारा दिए गए ऐसे उपहार बिल्कुल भी दहेज की परिभाषा के अंतर्गत नहीं हैं।" "जैसा कि आज क़ानून है, एक हिंदू पत्नी द्वारा अपनी व्यक्तिगत संपत्ति के पूर्ण स्वामित्व की कल्पना की जाती है और इस संदर्भ में विवाह का तथ्य बहुत कम या अप्रासंगिक है और वह एक हिंदू पुरुष की तरह ही संपत्ति की मालिक हो सकती है और उस पर कब्ज़ा कर सकती है।"[3]

कानूनी स्थिति

क़ानूनी तौर पर किसी भी स्त्री को अपने स्त्रीधन पर उतना ही अधिकार प्राप्त है जितना कि किसी भी अविभाजित हिंदू परिवार के कर्ता को संपत्ति के मामले में होता है। दूसरे शब्दों में, महिला का अपने स्त्रीधन पर पूर्ण अधिकार होता है। क़ानून के तहत महिला को यह पूरा अधिकार है कि वह अपना स्त्रीधन किसी की अनुमति के बिना बेच भी सकती है और यदि चाहे तो दान भी कर सकती है। महिला के पति और ससुराल के परिवार के सदस्यों का इस पर कोई अधिकार नहीं होता। ऐसे में यदि स्त्रीधन को ससुराल में लोग अपने कब्ज़े में रख लेते हैं तो महिला को अदालत का दरवाजा खटखटाने का पूरा अधिकार है। गौरतलब है कि यदि वह अपना स्त्रीधन पति को भी देती है तो उसे भी उसे लौटाना होगा हालांकि यह केवल तब ही संभव है जब पत्नी अपनी संपत्ति का लेखा जोखा रखे। किंतु शादी का खर्च और दहेज इस दायरे से बाहर हैं।

महिलाओं को हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 और हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 27 के तहत स्त्रीधन का अधिकार मिला है।

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 धारा महिला हिंदू की संपत्ति से संबंधित है और इसे उसकी पूर्ण संपत्ति मानती है। यह कहती है कि हिंदू नारी की संपत्ति उसकी आत्यंतिकतः अपनी संपत्ति होगी -- (1) हिंदू नारी के कब्ज़े में की कोई भी संपत्ति, चाहे वह इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व या पश्चात् अर्जित की गई हो, उसके द्वारा पूर्ण स्वामी के तौर पर न कि परिसीमित स्वामी के तौर पर धारित की जाएगी।

स्पष्टीकरण -- इस उपधारा में 'संपत्ति' के अंतर्गत वह जंगम और स्थावर संपत्ति आती है जो हिंदू नारी ने विरासत द्वारा अथवा वसीयत द्वारा अथवा विभाजन में अथवा भरण-पोषण के या भरण-पोषण की बकाया के बदले में अथवा अपने विवाह के पूर्व या विवाह के समय या पश्चात्‌ दान द्वारा किसी व्यक्ति से, चाहे वह सम्बन्धी हो या न हो, अथवा अपने कौशल या परिश्रम द्वारा अथवा क्रय द्वारा अथवा चिरभोग द्वारा अथवा किसी अन्य रीति से, चाहे वह कैसी ही क्यों न हो, अर्जित की हो और ऐसी संपत्ति भी जो इस अधिनियम के प्रारम्भ से अव्यवहित पूर्व स्त्रीधन के रूप में उसके द्वारा धारित थी।

(2) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट कोई बात ऐसी किसी संपत्ति पर लागू नहीं होगी जो दान

अथवा विल द्वारा या अन्य किसी लिखित के अधीन सिविल न्यायालय की डिक्री या आदेश के अधीन या पंचाट के अधीन अर्जित की गई हो। यदि दान, विल या अन्य लिखत अथवा डिग्री, आदेश या पंचाट के निबन्धन ऐसी संपत्ति में निर्वन्धित सम्पदा विहित करते हों।[4]

घरेलू हिंसा अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 12 में भी महिलाओं को स्त्रीधन का अधिकार दिया गया है। घरेलू हिंसा का शिकार होने पर वह अपना स्त्रीधन वापस ले सकती है। क़ानूनी भाषा में ससुराल में यदि कोई व्यक्ति किसी स्त्री के गहने (स्त्रीधन) अपने पास रखता है तो वह केवल उनका ट्रस्टी होता है न कि उनका मालिक और यदि महिला अपने गहने माँगती है और उसे देने से इनकार किया जाता है तो भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के रूप में उसके पास क़ानूनी विकल्प भी मौजूद है। भारतीय दंड संहिता की धार 405 के अनुसार, जो कोई, किसी भी तरीके से संपत्ति सौंपी गई हो, या संपत्ति पर किसी प्रभुत्व के साथ, बेईमानी से उस संपत्ति का दुरुपयोग करता है या उसे अपने उपयोग में परिवर्तित करता है, या उस संपत्ति का बेईमानी से उपयोग करता है या उस संपत्ति का निपटान क़ानून की किसी भी दिशा का उल्लंघन करते हुए करता है, जिसमें ऐसा विश्वास होता है। या किसी भी क़ानूनी अनुबंध, व्यक्त या निहित, का निर्वहन किया जाना है, जिसे उसने ऐसे ट्रस्ट के निर्वहन से संबंधित किया है, या जानबूझकर किसी अन्य व्यक्ति को ऐसा करने के लिए पीड़ित करता है, विश्वास का आपराधिक उल्लंघन करता है।[5]

अतः ससुराल पक्ष द्वारा, जिसमें उसका पति भी शामिल है, महिला के जेवर या कोई भी ऐसी चल या अचल संपत्ति, जो उसके स्त्रीधन के दायरे में आती हो, महिला की अनुमति के विरूद्ध अपने अधिकार में रखना और उसे लौटाए जाने से मना करना भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के अनुसार विश्वास का आपराधिक उल्लंघन है जो कि एक दंडनीय अपराध है और इसके लिए 3 साल के कारावास या आर्थिक दंड के रूप में जुर्माना अथवा दोनों प्रकार की सजा का प्रावधान किया गया है।

रश्मी कुमार बनाम महेश कुमार भाड़ा में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि "जब पत्नी अपनी स्त्रीधन संपत्ति पर प्रभुत्व अपने पति या परिवार के किसी अन्य सदस्य को सौंपती है और पति या परिवार के ऐसे अन्य सदस्य को बेईमानी से सौंपती है, उस संपत्ति का दुरुपयोग करता है या अपने उपयोग के लिए परिवर्तित करता है, या जान-बूझकर किसी अन्य व्यक्ति को देता है, तो वह विश्वास का आपराधिक उल्लंघन करता है।[6]

आमतौर पर महिला के पति का भी उसके स्त्रीधन पर कोई अधिकार नहीं होता किंतु इस स्थिति का एक अपवाद भी है। अत्यधिक संकट की स्थिति जैसे कि अकाल, बीमारी आदि किसी मुसीबत के समय पति अपनी पत्नी की अनुमति से उसके स्त्रीधन का उपयोग कर सकता है किंतु वह उसे लौटाने के लिए बाध्य है। वहीं घरेलू हिंसा का शिकार हो जाने की स्थिति में घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 भी महिलाओं को अपने स्त्रीधन का अधिकार देती है।

स्त्री धन की वसूली के लिए इस क़ानून के प्रावधानों को आसानी से लागू किया जा सकता है। मजिस्ट्रेट संरक्षण अधिकारी प्रतिवादी को निर्देश दे सकता है कि वह पीड़ित व्यक्ति को उसका स्त्रीधन या कोई अन्य संपत्ति या मूल्यवान वस्तु वापस लौटा दे जिसकी वह हक़दार है। फिर घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 182 के तहत क़ानून कहता है कि महिला स्त्रीधन, गहने, कपड़े और अन्य आवश्यक वस्तुओं का अधिकार प्राप्त करने की हक़दार है। ''अधिनियम के अंतर्गत 'आर्थिक दुरुपयोग' शब्द का भी प्रावधान किया गया है इसमें सभी या किसी भी ऐसे आर्थिक या वित्तीय संसाधनों से वंचित करना शामिल है जिसकी महिला सभी मौजूदा क़ानून के तहत हक़दार है।"[7]

स्त्रीधन की वसूली के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कोई भी महिला इसके लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए का सहारा नहीं ले सकती। उक्त धारा दहेज की माँग सहित किसी भी अन्य कारण से पत्नी को शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न से बचाने के लिए है न कि स्त्रीधन वापस पाने के लिए। स्त्रीधन हड़प लिए जाने की स्थिति में भारतीय दंड संहिता की धारा 405, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 14 और हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 27 का सहारा लिया जा सकता है। ऐसी स्थिति में जहाँ भारतीय दंड संहिता के तहत आपराधिक मुकदमा दर्ज किया जा सकता है वहीं अन्य दो अधिनियमों के तहत नागरिक मुकदमा दायर किया जा सकता है।

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने स्त्रीधन पर एक ऐतिहासिक निर्णय सुनाते हुए कहा कि किसी भी महिला का स्त्रीधन पूर्ण रूप से उसकी संपत्ति है और केवल उसे ही यह अधिकार है कि वह उसका क्या और किस प्रकार उपयोग करती है। न्यायालय ने साफ किया कि स्त्रीधन में पति को हिस्सेदार नहीं बनाया जा सकता। हाँलाकि किसी भी प्रकार की कठिन परिस्थितियों में पति को अपनी पत्नी की अनुमति से इसका उपयोग करने की अनुमति है। किंतु किसी भी परिस्थिति में पत्नी की अनुमति अनिवार्य है। ''न्यायमूर्ति संजीन खन्ना और दीपांकर दत्ता की पीठ ने यह फैसला सुनाया और अपने निर्णय में यह स्पष्ट किया कि स्त्रीधन पति और पत्नी की संयुक्त संपत्ति नहीं है और पति का इस पर कोई मालिकाना हक़ नहीं होता। किसी महिला को शादी से पहले, शादी के समय, विदाई के वक्त या उसके बाद उपहार स्वरूप दी गई संपत्ति उसका स्त्रीधन होता है और वह इसे खुद पर खर्च कर सकती है।''[8]

निष्कर्ष

स्त्रीधन इस पुरूष सत्तात्मक समाज में महिलाओं को सशक्त बनाने का एक माध्यम है। एक तरह से यह उन्हें समाज में आर्थिक रूप से कुछ स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह महिलाओं को उनकी संपत्ति का स्वामित्व और उस संबंध में निर्णय लेने में लैंगिक समानता प्रदान करने का भी एक साधन है। जहाँ आधुनिक युग में हिंदू महिलाओं को संपत्ति में अधिकार बहुत बाद में मिला वहीं स्त्रीधन के रूप में वह पुरातन काल से ही कुछ संपत्ति पर अपने स्वामित्व

का आनंद उठाती आई हैं। जहाँ यह विपत्ति के समय उन्हें वित्तीय निर्भरता प्रदान करता है वहीं अपने जीवन का पुनःनिर्माण करने में भी यह सहायक रहता है। किंतु चिंता की बात यह है कि आज के युग में भी महिलाएँ स्त्रीधन पर अपने पूर्ण अधिकार की बात से अनभिज्ञ है। वे पति या ससुराल पक्ष द्वारा उस पर अधिकार जताए जाने को सामान्य मान आज भी अपने इस अधिकार से वंचित हो जाती हैं। कहीं परिवार में शांति बनाए रखने के नाम पर तो कहीं जानकारी के अभाव में वे सदियों से उन्हें प्राप्त अपने अधिकारों से स्वयं को वंचित कर लेती हैं। दूसरी ओर जिन महिलाओं को उनके इस अधिकार की जानकारी है भी वे भी पर्याप्त व्यवस्था जा लेखा जोखा न होने के कारण कई बार अपने इस अधिकार को खो बैठती हैं। हमारे क़ानून ने महिलाओं के इस अधिकार को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त प्रावधान किए हैं किंतु जानकारी के अभाव को दूर किए बिना और अपने स्त्रीधन का लेखा जोखा रखे बिना किसी भी महिला के लिए अपने इस अधिकार की रक्षा करना कठिन ही होगा।

❑

संदर्भ सूची

1. https://www.lawweb.in/2012/12/distinction-between-dowry-and-stridhan.html
2. https://aishwaryasandeep.in/stridhan-concept-and-legal-significance/
3. https://www.lawweb.in/2012/12/distinction-between-dowry-and-stridhan.html
4. https://www.drishtijudiciary.com/hin/current-affairs/section-14-1-of-hindu-succession-act-1956
5. भारतीय दंड संहिता, धारा 405
6. https://www.lawctopus.com/academike/streedhan-right-woman/
7. https://www.lawctopus.com/academike/streedhan-right-woman/
8. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 26 अप्रैल, 2024 को स्त्रीधन के संबंध में सुनाया गया फैसला
8. 2024 आई.एन.एस.सी., 334, अनूप एस.बी. एवं अन्य बनाम दिपांकर दत्ता, नई दिल्ली

अन्य संदर्भ

1. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 2005
2. हिंदू विवाह अधिनियम, 1956

डॉ. चंद्र प्रकाश

पर्यावरण संरक्षण एवं राजस्थान उच्च न्यायालय का आदेश

प्रस्तावना

पृथ्वी ही एक मात्र ऐसा ग्रह है जिसमें जीवन व पर्यावरण है। वैश्विक पर्यावरण के बदलते प्रतिरूप तथा जीवन के अस्तित्व के बीच गहरा संबंध है। प्रसिद्ध पर्यावरणविद् डेनिस मीडोज के शब्दों में परिस्थितिक तंत्र के दो प्रमुख घटक पर्यावरण एवं मानव एक-दूसरे पर निर्भर है तथा एक-दूसरे की क्रिया-प्रतिक्रियाओं से प्रभावित होते हैं, दोनों की एक-दूसरे पर निर्भरता है। हमारे चारों ओर का वह वातावरण जो हमें घेरे हुए हैं, अर्थात् जिसने हमें हर ओर से अपनी परिधि में परिधित कर रखा है और हमारी भौतिक-अभौतिक समस्त आव्रयकताओं की पूर्ति जिसके माध्यम से हम कर पा रहे हैं, वस्तुतः ऐसा आवरण ही हमारा पर्यावरण है। हमारा पर्यावरण ही जैव मंडल के समस्त जीवधारियों के लिए विकास का नियामक है और पर्यावरण सदा से ही मानवीय अस्तित्व का प्रश्न रहा है। मानवीय जीवन का सीधा संबंध पर्यावरण से है अर्थात् मानवीय जीवन तभी संभव है जब पर्यावरण स्वच्छ एवं साफ हो। प्रकृति की अनुपम कृति के रूप में मानव ने सदा से ही अपने लाभ एवं स्वार्थ के लिए पर्यावरण का उपयोग किया है और इसे प्रभावित किया है।

प्राकृतिक पर्यावरण हमेशा से ही मनुष्य के लिए चिंता का विषय रहा है परंतु संसाधनों का दोहन तथा पारिस्थिति ह्रास के मुद्दे गंभीर चिंतन का विषय तब बने, जब द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बड़े पैमाने पर औद्योगिकीकरण की शुरूआत हुई। मुख्यतः विश्व पर्यावरण की रक्षा के प्रति जागरूकता 1960 के दशक से शुरू हुई। इसके बाद ही विश्व के सभी देशों ने अपने-अपने स्तर पर पर्यावरण असंतुलन को रोकने के उपाय शुरू किए तथा अनेकों विश्व सम्मेलनों का आयोजन, क़ानूनों का निर्माण व अनेकों लक्ष्यों का निर्धारण किया गया तथा उन निर्धारकों को प्राप्त करने के लिए प्रयास किए गए जिनमें मानव पर्यावरण पर 'संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन', 'स्ट्राक होम' (स्वीडन 1972), बेलग्रेड कॉन्फ्रेंस 1975, नैरोबी सम्मेलन 1982, कोपेहेगन (रियो) सम्मेलन 1992, क्योटो प्रोटोकाल 1997, बाली सम्मेलन 2007, कोपेनहेगन सम्मेलन 2009 प्रमुख है। जलवायु परिवर्तन पर 1992 का 'रियो विश्व सम्मेलन' (पृथ्वी सम्मेलन) में 162 देशों ने हस्ताक्षर कर संस्थागत समझौते वाले राष्ट्रों से आग्रह किया गया कि वे ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को वर्ष 2000 तक की स्थिति के अनुसार उसे 1990

के स्तर तक ले जाने में स्थिरता लाने का पर्यत्न करें[1]। साथ ही 1997 में क्योटो (जापान) में हुए तीसरे सम्मेलन में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन की मात्रा को 2008 से 2012 की अवधि के दौरान 1990 के स्तर से भी 5 प्रतिशत और नीचे लाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। संपोषित विकास पर विश्व सम्मेलन जोहान्सबर्ग 2002 में कुछ लक्ष्य निर्धारित किए गए जैसे कि 2015 तक स्वास्थ्य रक्षा में वृद्धि किए बिना जनसंख्या के अनुपात को आधा किया जाए। 2020 तक रसायनों का उत्पादन और प्रयोग इस प्रकार किया जाए जिसका मानव के स्वास्थ्य और पर्यावरण पर कोई प्रतिकूल असर न पड़े[2]।

सन् 1992 में स्थापित UNEP (United Nation Environmental Programme) संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, पर्यावरण पर कार्य करने वाला अग्रणी वैविक प्राधिकरण है। यू.एन. ई.पी. का ध्येय राष्ट्रों और लोगों को भविष्य की पीढ़ियों से समझौता किए बिना उसके जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए प्रेरित करना, सूचित करना और सक्षम बनाना है। यू.एन.ई.पी. देश, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय दायित्वों को लागू करने में मदद करते हुए पर्यावरण मानकों और प्रथाओं को मजबूत करने के लिए अपनी वैश्विक विशेषज्ञता का उपयोग करता है। यू.एन.ई.पी. का प्रमुख कार्य निम्न-कार्बन उत्सर्जन हेतु प्रयास करना, पर्यावरणीय शासन और क़ानून को मजबूत करने, पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा एवं नीतिगत निर्णयों के लिए साक्ष्य आधारित आँकड़े उपलब्ध कराने पर केंद्रित है। संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (COP 28) 'विश्व जलवायु कार्रवाही शिखर सम्मेलन' या UNFCCC का सम्मेलन 30 नवंबर से 13 दिसंबर, 2023 तक एक्सपो सिटी, दुबई में आयोजित हुआ, जिसका उद्देश्य सरकारों को वैश्विक तापमान वृद्धि को सीमित करने और जलवायु परिवर्तन में स्थिरता लाना था। COP 28 सम्मेलन की थीम वर्ष 2030 तक वैश्विक स्तर पर नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता को तीन गुना करने और ऊर्जा दक्षता सुधार की वैश्विक औसत वार्षिक दर को दोगुना करने का आहान किया गया। सम्मेलन में प्रतिभाग करने वाले देशों के मध्य समझौते के तहत जलवायु परिवर्तन के बुरे प्रभावों को कम करने एवं 2050 तक शुद्ध शून्य तक पहुँचने के लिए 'न्यायसंगत, व्यवस्थित तरीके से' कार्बन स्रोतों पर कमी लाने पर हस्ताक्षर किए गए[3]। साथ ही इस हेतु जीवाश्म ईंधन को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने एवं अक्षय ऊर्जा पर सहमति बनी, परंतु चीन व भारत ने अक्षय ऊर्जा के अपने उत्पादन को तिगुना करने की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर नहीं किए।

सन् 1992 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्थापित एवं प्रतिवर्ष 05 जून को मनाये जाने वाले 'विश्व पर्यावरण दिवस' की 2024 की थीम 'भूमि बहाली मरूस्थलीकरण और सुखे से निपटने की क्षमता' रखी गई है एवं जिसका नारा है, ''हमारी भूमि, हमारा भविष्य''[4]। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अनुसार, क्षरित भूमि को बहाल करने से आजीविका में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है, गरीबी कम हो सकती है और चरम मौसम के प्रति लचीलापन पैदा हो सकता है। विश्व पर्यावरण दिवस मनाने का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण के मुद्दों पर ध्यान केंद्रित

करना तथा पर्यावरण में हो रही क्षति को रोकन तथा इसके रोकथाम हेतु लोगों को जागरूक करना था, परंतु भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखें तो यहाँ की जनसंख्या जन्मदर अन्य देशों की तुलना में बहुत अधिक है और हम विश्व में सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश बन गए हैं। ऐसे में पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रयास नाकाफी साबित हो रहे है। यहाँ प्रतिवर्ष वनक्षेत्र कम हो रहे हैं और हर वर्ष लाखों हेक्टयर वन आग से जल रहे हैं जिससे आर्थिक के साथ-साथ पर्यावरणीय नुकसान अधिक हो रहा है।

पर्यावरण असंतुलन एवं परिणाम : पर्यावरण एवं प्राणी एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं तथा मानव ने सदा से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर अपनी आवश्यकताओं को पूरा किया है। बढ़ती जनसंख्या एवं आवश्यकताओं ने जहाँ प्रकृति पर मानवीय निर्भरता को बढ़ावा दिया, वहीं इसके बेतहाशा दोहन ने पर्यावरण को गंभीर क्षति पहुँचाई है, जिसके परिणाम स्वरूप जलवायु परिवर्तन, वाटर साइंटिफिक इश्यूज, ओजोन डिप्लेशन, वैश्विक ताप वृद्धि, गंभीर पेयजल समस्या, वायु प्रदूषण, कार्बन उत्सर्जन और बदलते मौसमी चक्र तथा प्रदूषण तक की अनेक समस्याओं का जन्म हुआ। प्रकृति ने सभी जीवधारियों के लिए सभी वस्तुएँ उपलब्ध की, किंतु मानव के लालच ने प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन कर अपने अस्तित्व को ही चुनौती दे डाली है। विकास के नाम पर कंकरीट के जंगलों में वृद्धि, वृक्षों का अत्याधिक कटान, बढ़ते वाहनों की संख्या, फैक्ट्रियों व कारखानों की गंदगी का नदियों में विसर्जन, ग्लोवल वार्मिंग, ग्रीन हाउस गैसों का बढ़ता प्रभाव, बढ़ते धुएँ, जंगलों में आग, औद्योगिकीकरण व नए-नए वैज्ञानिक आविष्कारों तथा शोर ने जल, वायु और ज़मीन को प्रदूषित कर दिया है। विश्व का कोई भी समृद्ध विज्ञान प्राकृतिक हवा, जल, व मिट्टी का निर्माण नहीं कर सकता है। विकास की होड़ व नित नए-नए आविष्कार, नई-नई खोजों व प्रयोगों ने पर्यावरण संतुलन को बिगाड़ दिया है। प्रकृति अपने तीनों ऋतुओं में बदली व असंतुलित हो रही है, सर्दियों में बर्फबारी हर साल नए-नए स्थानों पर हो रही है, जिन स्थानों में कभी बाढ़ नहीं आती थी वहाँ बाढ़ आ रही है और नए-नए रिकार्ड बना रही है, इसे हम ग्लोबल वार्मिंग माने या ग्लोबल कूलिंग। हमारी पृथ्वी की भौगोलिक स्थिति बदल रही है, गर्मियों में भयंकर गर्मी का सामना तो हमें करना पड़ता ही है तथा असमय वर्षा के कारण भयंकर बाढ़ का सामना भी करना पड़ रहा है। इस तरह से हम हर साल तीन बार नए रिकार्ड के साथ प्रकृति की पराकाष्ठा को देखते हैं। एक अनुमान के अनुसार दुनिया में वर्षभर गर्मी से जान गँवाने वाले लोगों की संख्या 05 लाख से भी अधिक है। पर्यावरण असंतुलन के कारण आज बादलों का फटना, वे मौसम बरसात का होना, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, ग्लेशियरों का तेजी से पिघलना, भूकम्प, भूस्खलन, मौसम में बदलाव व सुनामी जैसी आपदा से जनता को जुझना पड़ रहा है। इससे न केवल मानवीय जीवन प्रभावित हो रहा है, अपितु आर्थिक नुकसान भी हो रहा है। एक अनुमान के मुताबिक 2050 तक वैश्विक अर्थव्यवस्था में आय करीब 19 प्रतिात तक घट जाएगी। गर्मी और सूखे का प्रभाव सीधे फसलों पर पड़ रहा है तथा भारत में 2050 तक देश की आबादी अपनी 22

प्रतिशत आय गवाँ देगी। जैसे-जैसे गर्मी बढ़ रही है, वैसे-वैसे भारत में एयर कंडिसनर की माँग भी बढ़ रही है। भारत सरकार का अनुमान है कि आने वाले 10 वर्षों के भीतर भारत में आधे से ज्यादा घरों में एसी होंगे और जिसका सीधा असर जलवायु परिवर्तन से हमारी जेब में भी पड़ेगा। पर्यावरण मंत्रालय के अधीन सौ से अधिक संस्थाओं और 200 वैज्ञानिकों के इंडियन नेटवर्क फॉर क्लाइमेट चेंज असेसमेंट (INCCA) की हालिया रिपोर्ट (2010) के मुताबिक अगले 20 सालों के भीतर देश के औसत तापमान में 1.7 से 2.2 डिग्री की बढ़ोत्तरी का अनुमान लगाया गया है। साथ ही हिमालयी क्षेत्र यानी उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर और हिमाचल में भारी बारिश के औसत व पूर्वोत्तर में वर्षा के औसत में कमी तथा देश के सभी भागों में आने वाली बाढ़ की तीव्रता में 10-30 प्रतिशत की वृद्धि का अनुमान लयगाया गया है[5]।

भारत में अतीतकाल से ही वनस्पतियाँ, पेड़-पौधे, वन, आग, जल, पर्वत एवं पहाड़ आदि पूजनीय रहे हैं। हमारे वेद, पुराण, उपनिषदों में पर्यावरणीय पैरवी देखने को मिलती है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रावधान का वर्णन मिलता है। भारत में स्वतंत्रता पूर्व एवं पश्चात पर्यावरण की सुरक्षा एवं इसे नुकसान से बचाने के लिए समय-समय पर प्रयास किए जाते रहे हैं। सन् 1986 में क़ानून द्वारा इसके संरक्षण हेतु पर्यावरण संरक्षण अधिनियम लागू किया गया, जिसमें जल, मृदा, वन, वन्य जीव एवं जैव विविधता संरक्षण हेतु क़ानूनी प्रावधान किए गए हैं। पर्यावरण संरक्षण हेतु फॉरेस्ट कंजर्वेशन, सॉइल कंजर्वेशन, वेस्ट मैनेजमेंट, पब्लिक अवेयरनेस एवं प्रदूशण नियंत्रण जैसे उपाय किए जाने पर बल दिया गया है।

पर्यावरण संक्षरण हेतु माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय का निर्णय : वर्तमान समय में संपूर्ण विश्व पर्यावरणीय असंतुलन और मौसमी बेरूखी से जूझ रहा है। जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ताप वृद्धि के परिणाम स्वरूप संपूर्ण भारतवर्ष भीषण गर्मी और लू से झुलस रहा है। पर्यावरण संरक्षण और जलवायु परिवर्तन को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान उच्च न्यायालय ने मई, 2024 को गर्मी और लू के कहर और इससे हो रही मौतों को लेकर स्वतः संज्ञान लेते हुए इसे राष्ट्रीय आपदा घोषित करने की जरूरत महसूस की तथा राज्य सरकार को निर्देशित किया है कि भीषण गर्मी (हीट स्ट्रोक) से जान गँवाने वालों के आश्रितों को समुचित एवं उपयुक्त मुआवजा दे। साथ ही उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति ने राजस्थान सरकार के मुख्य सचिव को निर्देश दिया कि सरकार जलवायु परिवर्तन परियोजना के तहत तैयार 'ग्रीष्मकालीन कार्य योजना' के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए तत्काल और उचित कदम उठाने हेतु विभिन्न विभागों की समितियों का गठन करे। न्यायालय ने कहा कि वनों की कटाई और प्रदूषण जैसी मानवीय गतिविधियाँ पर्यावरण विनाश को बढ़ावा देती है और इसके परिणामस्वरूप अत्यधिक गर्मी और जलवायु परिवर्तन से बहुत नुकसान हो रहा है। राजस्थान में तापमान 50 सेल्सियस से अधिक हो गया है, जिससे लाखों लोग प्रभावित हो रहे हैं। न्यायालय ने कहा कि 'माँ पृथ्वी स्पष्ट रूप से कार्यवाही करने का आह्वान कर रही है। प्रकृति पीड़ित है। जलवायु परिवर्तन, प्रकृति में मानव निर्मित परिवर्तन और जैव विविधता को बाधित करने वाले अपराध जैसे वनों

की कटाई, भूमि उपयोग में परिवर्तन, प्राकृतिक जल निकायों को नश्ट करना आदि ग्रह के विनाश की गति को बढ़ा सकते हैं। पेड़ों की तेजी से कटाई ने जलवायु परिवर्तन की आपदा को जन्म दिया है'। न्यायालय ने आगे कहा कि 'हम सभी को अपनी धरती माँ से मिलने वाली हर चीज का सम्मान करना चाहिए और उसे बनाए रखना चाहिए। हमें धरती माँ को बचाना चाहिए ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियाँ सुरक्षित वातावरण में रह सकें। हम पेड़ों, प्राकृतिक वनस्पतियों, पानी और प्राकृतिक संसाधनों को बचाकर धरती को बचा सकते हैं। हमें पर्यावरण प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग को नियंत्रित करने के लिए हर संभव उपायों का सख्ती से पालन करना चाहिए। प्रदूषण को रोकने और ग्लोबल वार्मिंग के प्रयासों को कम करने के लिए सभी को अपने आस-पास के इलाकों में ज्यादा से ज्यादा पेड़ लगाने चाहिए'।

हीटवेव को लेकर माननीय न्यायालय ने कहा कि 'हीटवेव के रूप में मौसम की स्थिति के कारण इस महीने में सैकड़ों लोगों की जान चली गई है। हर साल एक राष्ट्र हीटवेव, बारिा और शीत लहर के रूप में चरम मौसम की स्थिति का सामना करता है, जिससे कई लोग, विशेष रूप से गरीब लोग अपनी जान गंवाते हैं'। न्यायालय ने सरकार से आग्रह किया कि 'हीट और शीत लहर के कारण होने वाली मौतों की रोकथाम विधेयक, 2015 को शीघ्र लागू करे। साथ ही वर्षा जल को संग्रहीत करने, वृक्षारोपण एवं संसाधनों के संरक्षण पर आवश्यक कार्यवाही करने पर बल दिया।

राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति माननीय अनूप कुमार की पीठ ने राज्य सरकार के अधिकारियों को भारी आवागमन वाली सड़कों पर पानी छिड़कने, ठंडक वाले आश्रय स्थल के लिए जगह उपलब्ध कराने, लाल बत्तियों पर छाया की व्यवस्था करने, लू के रोगियों के उपचार के लिए सभी स्वास्थ्य केंद्रों पर सभी संभव सुविधाएँ उपलब्ध कराने के भी निर्देश दिए। साथ ही यह भी निर्देशित किया कि वह अत्यधिक गर्मी के दौरान कुलियों, ठेला और रिक्शा चालकों सहित खुले में काम करने वाले सभी श्रमिकों के लिए दोपहर 12 बजे से अपराह्न 3 बजे तक आराम करने की व्यवस्था करे। जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने के लिए न्यायालय ने निर्देश दिए कि --

1. प्राधिकारियों द्वारा तत्काल प्रभाव से 'हीट एक्शन प्लान' और 'हीट से संबंधित बीमारियों के लिए स्वास्थ्य प्रणालियों की तैयारी को मजबूत कर उसे लागू किया जाना चाहिए।
2. भारी सार्वजनिक आवाजाही वाले मार्गों पर पानी का छिड़काव करें।
3. दैनिक वेतन भोगियों और पशुओं जैसी कमजोर आबादी के लिए ठंडे स्थान और छाया प्रदान करें।
4. जगह-जगह लोगों के लिए छाया, साफ पीने के पानी आदि की व्यवस्था की जाए तथा उन्हें ओ.आर.एस. पैकेट और आम पन्ना वितरित करें।
5. सभी स्वास्थ्य सुविधाएँ हीटस्ट्रोक रोगियों के उपचार के लिए सुसज्जित हों एवं उनका प्राथमिकता से उपचार करें।

6. श्रमिकों को दोपहर की अत्यधिक गर्मी में आराम करने की व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।
7. लोगों को गर्मी से संबंधित आवश्यक जानकारी एवं चेतावनी आदि विभिन्न मीडिया के माध्यम से प्रचारित एवं प्रसारित की जाए।
8. हीटवेव से प्राण गवा चुके लोगों के परिवारों को तत्वरित उचित मुआवजा एवं सहयोग दिया जाना चाहिए।

हीटवेव को लेकर माननीय राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा स्वतः लिया गया संज्ञान एवं सरकार को दिए गए आवश्यक निर्देशों से स्पष्ट है कि पर्यावरण संरक्षण हम सब के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान दौर में हम सब को अच्छे पर्यावरण की आवश्यकता है, परंतु उसके संरक्षण एवं परिवर्धन के लिए कोई अपना प्रयास और सहयोग नहीं करना चाहता है। यह मानव की नैतिक जिम्मेदारी एवं कर्त्तव्य है कि वह पीड़ित व्यक्ति की हर संभव मदद करे और उसे सुरक्षा प्रदान करे। अगर हम स्वयं एवं आमजन के जीवन को बचाना चाहते हैं तो हमें स्वयं जागरूक होना होगा एवं पर्यावरण संरक्षण के प्रयास करने होंगे। हम न केवल पेड़ लगाएँ बरन् उनकी रक्षा भी करें। पर्यावरण की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए हमें विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों के बेतहाशा दोहन को रोकना होगा तथा अपनी आवश्यकताओं पर नियंत्रण स्थापित कर प्रकृति को प्रदूषण से बचाना होगा तभी हम प्रकृति का सतत विकास करने में सफल होंगे।

❑

संदर्भ

1. डॉ. बिसवाल, तपन, 'मानवाधिकार जेंडर एवम् पर्यावरण, विवा बुक प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली, 2009, पृ. 333
2. वही, पृ. 339
3. https://www.unep.org/interactives/beat-plastic-pollution/ dt. 14.06.2024
4. https://www.unep.org/resources/Global-Resource-Outlook-2024 dt.14.06.2024
5. दैनिक जागरण, दिल्ली, 17 नवंबर, 2010, पृ. 13।

डॉ सुधा कुमारी

नई कर व्यवस्था : एक विश्लेषण

पुरानी कर प्रणाली (जिसे वर्तमान कर व्यवस्था भी कहा जाता है) सकल आय से कई छूट, कटौती, नुकसान के दावे की अनुमति देती है और तीन आय स्लैब के लिए कर की दरें बहुत अधिक हैं। वरिष्ठ नागरिकों और अति वरिष्ठ नागरिकों को कर की दर में कुछ रियायत मिलती है। हालाँकि, कर योग्य आय पर पहुँचने के लिए कई छूट, कटौती, नुकसान के दावे के साथ आय के पाँच स्रोतों से आय की गणना करना विशेष रूप से व्यक्तियों के लिए एक थकाऊ अभ्यास है और कुछ युक्तिकरण और सरलीकरण की वास्तव में आवश्यकता थी। इसे सरल और कम बोझिल अभ्यास बनाने के लिए, छूट और कटौती को हटाना और विभिन्न आय स्लैब के लिए कर दरों को कम करना आवश्यक था, इस प्रकार, व्यक्तियों और एचयूएफ व्यवसाय/गैर-व्यवसाय को सूचित निर्णय लेने और उनकी कर दक्षता को अधिकतम करने के लिए सशक्त बनाया गया।

आयकर अधिनियम, 1961 की नई धारा 115BAC को वित्त अधिनियम, 2020 द्वारा वित्तीय वर्ष 2020-21 (मूल्यांकन वर्ष 2021-22) से पेश किया गया था, जो व्यक्तियों और हिंदू अविभाजित परिवार के करदाताओं को नई रियायती दरों पर कर दर का विकल्प देता है, जिनकी व्यवसाय या पेशे से कोई आय नहीं है और कर योग्य आय पर पहुँचने के लिए छूट और कटौती का दावा नहीं करते हैं। नई आयकर व्यवस्था वैकल्पिक है, और आप अभी भी पुरानी (मौजूदा) व्यवस्था का विकल्प चुन सकते हैं। एक बार जब आप नई कर व्यवस्था चुन लेते हैं, तो विकल्प को किसी भी बाद के वर्ष के लिए वापस लिया जा सकता है।

हालाँकि नई व्यवस्था में स्लैब दरों में उल्लेखनीय कमी की गई है, लेकिन यह पुरानी व्यवस्था के तहत मिलने वाली कर कटौती और छूट का एक बड़ा हिस्सा छीन लेती है। हालाँकि, हम पाते हैं कि कुछ खर्च/कटौतियाँ नई व्यवस्था में भी उपलब्ध हैं --

- वेतनभोगी व्यक्तियों के लिए 50,000 रुपए तक की मानक कटौती।
- **पेंशन पर मानक कटौती** : धारा 57(आईआईए) के तहत 15,000 रुपए या पेंशन का 1/3 जो भी कम हो।
- परिवहन भत्ता केवल विकलांग व्यक्तियों को
- रोजगार के हिस्से के रूप में वाहन भत्ता

- यात्रा/भ्रमण/स्थानांतरण पर यात्रा भत्ता और दैनिक भत्ता
- धारा 80 सीसीडी (2) के अंतर्गत अधिसूचित पेंशन योजना में नियोक्ता का अंशदान
- धारा 80 सीसीएच के अंतर्गत अग्निवीर कॉर्पस फंड में सभी योगदान)
- धारा 10(10एए) के तहत अवकाश नकदीकरण
- धारा 10(10) के अंतर्गत ग्रेच्युटी
- धारा 10(10सी) के अंतर्गत स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना हेतु छूट
- धारा 24(बी) के तहत किराए पर दी गई संपत्ति पर गृह ऋण पर ब्याज
- 50,000 रुपए तक के उपहार
- धारा 80जेजेए के तहत अतिरिक्त कर्मचारी लागत के लिए कटौती

पुरानी और नई कर व्यवस्था में अंतर

पुरानी कर व्यवस्था में कर योग्य आय पर पहुँचने से पहले कई छूट, कटौती और नुकसान की अनुमति थी, लेकिन इसकी कर दर ऊंची थी। लेकिन नई कर व्यवस्था में 'कम कर दरें लेकिन कोई कटौती/छूट नहीं' मुख्य विशेषता है।

पुरानी कर व्यवस्था अलग-अलग आयु वर्ग के लोगों के साथ अलग-अलग व्यवहार करती थी, लेकिन नई व्यवस्था सभी आयु वर्ग के लोगों के साथ एक समान व्यवहार करती है।

पुरानी कर व्यवस्था सभी स्रोतों से आय वाले सभी करदाताओं के लिए है, लेकिन नई कर व्यवस्था उन व्यक्तियों और हिंदू अविभाजित परिवार के करदाताओं के लिए उपलब्ध है जिनकी व्यवसाय/पेशे से आय नहीं है।

AY 2024-25 से पहले, नई कर व्यवस्था एक विकल्प थी और यदि इसे नहीं चुना जाता है, तो पुरानी कर व्यवस्था स्वचालित रूप से डिफॉल्ट विकल्प के रूप में लागू होगी। हालाँकि, AY 2024-25 से, नई कर व्यवस्था स्वचालित रूप से डिफॉल्ट विकल्प के रूप में लागू होगी। लेकिन अगर आप पुरानी कर व्यवस्था चुनना चाहते हैं, तो आप पुरानी कर व्यवस्था चुन सकते हैं।

नई और पुरानी कर व्यवस्था के तहत विभिन्न आय स्लैब के लिए तुलनात्मक कर दरें नीचे सारणीबद्ध रूप में दी गई हैं ताकि व्यापक अवलोकन किया जा सके। सुविधा के लिए, कृपया तालिका में अपना कर विकल्प, आय स्लैब और वर्ष चुनें।

वित्त वर्ष 2023-24 में पुरानी और नई कर व्यवस्था के तहत तुलनात्मक कर दरें -- आय

आयु : 60 वर्ष एवं एनआरआई

आयु 60 वर्ष से 80 वर्ष

आयु 80 वर्ष से अधिक

सभी उम्र

2,50,000 रुपए तक सभी में शून्य
2,50,001 रुपए से 3,00,000 रुपए
5 प्रतिशत
शून्य
शून्य
शून्य
3,00,001 रुपए से 5,00,000 रुपए
5 प्रतिशत
5 प्रतिशत
शून्य
5 प्रतिशत
5,00,001 रुपए से 6,00,000 रुपए
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
5 प्रतिशत
6,00,001 रुपए से 9,00,000 रुपए
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
10 प्रतिशत
9,00,001 रुपए से 10,00,000 रुपए
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
20 प्रतिशत
15 प्रतिशत
10,00,001 रुपए से 12,00,000 रुपए
30 प्रतिशत
30 प्रतिशत
30 प्रतिशत
15 प्रतिशत
12,00,001 रुपए से 15,00,000 रुपए
30 प्रतिशत

30 प्रतिशत

30 प्रतिशत

20 प्रतिशत

15,00,000 रुपए और उससे अधिक सभी आयु वर्ग के लिए

एक बार जब आप कुल आय की गणना कर लेते हैं, तो वित्त वर्ष 2023-24 (वित्त वर्ष 2024-25) के लिए नई कर व्यवस्था में विभिन्न आय समूहों के लिए कर की गणना निम्नानुसार की जा सकती है --

आय

आयकर दरें

वित्तीय वर्ष 2023-24 (वित्त वर्ष 2024-25) (सभी आयु वर्ग)

3,00,000 रुपए तक

शून्य

3,00,000 रुपए से 6,00,000 रुपए

3,00,000 रुपए से अधिक की आय पर 5 प्रतिशत

6,00,000 रुपए से 900,000 रुपए

15,000 रुपए, 6,00,000 रुपए से अधिक आय पर 10 प्रतिशत

9,00,000 रुपए से 12,00,000 रुपए

45,000 रुपए, 9,00,000 रुपए से अधिक आय पर 15 प्रतिशत

12,00,000 रुपए से 1500,000 रुपए

90,000 रुपए, 12,00,000 रुपए से अधिक आय पर 20 प्रतिशत

15,00,000 रुपए से अधिक

1,50,000 रुपए, 15,00,000 रुपए से अधिक आय पर 30 प्रतिशत

कई छूटों और कटौतियों तथा उच्च कर दरों के साथ, पुरानी प्रणाली निश्चित रूप से करदाताओं और कर अधिकारियों दोनों के लिए नई प्रणाली की तुलना में अधिक बोझिल प्रक्रिया है। नई प्रणाली में कई रियायती कर दरें हैं और गणना बहुत अधिक मानकीकृत, सरल और तर्कसंगत है। हालाँकि, यह तय करने के लिए कोई निर्धारित सूत्र नहीं है कि दोनों व्यवस्थाओं में से कौन अधिक लाभकारी है। धारा 115BAC के तहत नई कर व्यवस्था चुनने का निर्णय लेने से पहले पुरानी और नई स्लैब दरों के अनुसार कुल कर व्यय की गणना अवश्य करनी चाहिए।

❑

डॉ. निशा केवलिया

साइबर अपराध और साइबर विधि : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

साइबर अपराध दुनिया में ख़तरनाक रूप से प्रचलित हो गया है, जहाँ अधिकांश लेन-देन डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग करके ऑनलाइन किए जाते हैं। वर्तमान साइबर अपराध प्रवृत्तियों के आधार पर साइबर हमलों की लागत 2026 तक दुनिया भर में डॉलर 20 ट्रिलियन से ऊपर पहुँच सकती है।

प्रौद्योगिकी संचालित समाज में, इंटरनेट ने मानव के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया है। कई जाँचकर्ताओं ने बताया कि साइबर स्पेस एक भौतिक स्थान है, लेकिन वास्तव में यह अमूर्त डेटा का प्रतिनिधित्व करने वाला एक कंप्यूटर-जनरेटेड निर्माण है। यह एक आभासी माध्यम है। इसकी कोई सीमा नहीं है, कोई भौगोलिक द्रव्यमान या गुरुत्वाकर्षण नहीं है। साइबर गतिविधियों के कारण कई प्रकार की प्रगति हुई हैं, लेकिन बड़ा सवाल यह है कि इसे विनियमित किया जाना चाहिए या नहीं? साइबर विधि वह विधि है जो साइबर स्पेस को नियंत्रित करती है। साइबर स्पेस एक बहुत व्यापक शब्द है और इसमें कंप्यूटर, नेटवर्क, सॉफ्टवेयर और डेटा स्टोरेज डिवाइस जैसे हार्ड डिस्क, यूएसबी डिस्क, इंटरनेट, वेबसाइट, ईमेल और यहाँ तक कि इलेक्ट्रॉनिक डिवाइस जैसे सेल फोन, एटीएम मशीन शामिल हैं। साइबर स्पेस पर व्यक्तियों और संगठनों की बढ़ती निर्भरता के परिणामस्वरूप कई साइबर अपराध हो रहे हैं।

साइबर अपराध क्या है?

साइबर अपराध गैर-क़ानूनी कृत्य हैं, जिसमें कंप्यूटर का इस्तेमाल या तो उपकरण या लक्ष्य या दोनों के रूप में किया जाता है। साइबर अपराध को ऐसे अपराध के रूप में परिभाषित किया जाता है, जहाँ कंप्यूटर अपराध का माध्यम होता है या अपराध करने के लिए कंप्यूटर वर्ग एक उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची के अनुसार, साइबर अपराध राज्य सूची के अंतर्गत आता है। इसमें अवैध या आपत्तिजनक टिप्पणियाँ शामिल हैं जो विभिन्न प्रकार के अपराध करने के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाती हैं। साइबर अपराध में अपराध की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है, जो व्यक्तियों, संगठनों के साथ-साथ आम लोगों को भी प्रभावित कर सकती है।

इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स (ई-कॉमर्स) और ऑनलाइन शेयर ट्रेडिंग में भारी वृद्धि के कारण साइबर अपराध की घटनाओं में असामान्य वृद्धि हुई है। हालाँकि, डेटा और कंप्यूटर नेटवर्क जैसे फायरवॉल, एँटीवायरस सॉफ्टवेयर और अन्य तकनीकी समाधानों को कंप्यूटर वायरस से संक्रमित होने से बचाने के लिए सिस्टम मौजूद हैं, लेकिन भारत में मूल्यवान डेटा की सुरक्षा और साइबर अपराध से निपटने के लिए इन तकनीकों के प्रभावी उपयोग की दिशा में प्रयास किए जाने चाहिए यहाँ तक कि आईटी उपकरणों के विशेषज्ञ उपयोगकर्ता भी साइबर उत्पीड़न के बारे में नहीं जानते होंगे। प्रौद्योगिकी में प्रगति के साथ-साथ साइबर अपराध और उससे संबंधित अन्य मुद्दों के बारे में जागरूक होना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। साइबर सुरक्षा तकनीक के ज्ञान और इंटरनेट का उपयोग करते समय बरती जाने वाली सावधानी और उपयोगकर्ता और सर्वर सिस्टम द्वारा अपनाए गए रक्षात्मक उपायों पर निर्भर करती है। साइबर विधि संचार प्रौद्योगिकी, मुख्य रूप से 'साइबर स्पेस', यानी इंटरनेट के उपयोग से जुड़े विधिक मुद्दों को दर्शाता है। यह बौद्धिक संपदा, गोपनीयता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अधिकार क्षेत्र सहित कई विधिक क्षेत्रों का एक जंक्शन है। यह स्थापित है कि साइबर विधि भौतिक दुनिया के लिए बनाए गए नियमों, इंटरनेट पर मानवीय गतिविधियों पर लागू होती है। साइबर विधि मूल रूप से भारत में इंटरनेट, वर्ल्ड वाइड वेब और साइबर स्पेस से संबंधित लेन-देन और गतिविधियों के लगभग सभी पहलुओं से संबंधित है।

साइबर अपराधों में प्रायोजित समूह या व्यक्तिगत हैकर शामिल होते हैं और इसके बड़े राजनीतिक या आर्थिक निहितार्थ हो सकते हैं। साइबर जासूसी के सबसे महत्त्वपूर्ण मामलों में से एक पाँच चीनी सैन्य हैकर थे जिन पर कंप्यूटर हैकिंग, आर्थिक जासूसी और अमेरिकी संस्थाओं पर लक्षित अन्य अपराधों के लिए अभियोग लगाया गया था।

साइबर अपराध के प्रकार

डेटा उल्लंघन : गोपनीय जानकारी, महत्त्वपूर्ण रिकॉर्ड या वित्तीय पहुँच जैसे संवेदनशील डेटा तक पहुँच या लीक। डेटा उल्लंघनों को कई तरह के जोखिम कारकों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, जैसे कि कमजोर पासवर्ड और साइबर सुरक्षा प्रोटोकॉल, सॉफ्टवेयर सिस्टम की कमजोरियाँ या अंदरूनी ख़तरे। इसके परिणामस्वरूप डेटा से समझौता, वित्तीय क्षति या प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँच सकता है। वेरिजोन की डेटा उल्लंघन जाँच रिपोर्ट ने इस बात पर प्रकाश डाला कि 82 प्रतिशत उल्लंघनों में मानवीय तत्व शामिल थे।

कंप्यूटर वायरस : शायद यह सबसे आम प्रकार का दुर्भावनापूर्ण सॉफ्टवेयर है जो खुद को दोहरा सकता है और दूसरे सिस्टम में फैल सकता है, जिससे अक्सर कंप्यूटर फाइलों या प्रोग्राम को नुकसान पहुँचता है। कंप्यूटर वायरस के उदाहरणों में मेलिसा, आईलवयू और निमडा वायरस शामिल हैं -- ये सभी फाइलों को संक्रमित करने और कंप्यूटर सिस्टम को नुकसान पहुँचाने के लिए तेजी से फैलते हैं।

डीडीओएस हमले : वितरित सेवा निषेध हमले, या क्क्वै हमले, किसी नेटवर्क या वेबसाइट पर ट्रैफिक को बढ़ाने के लिए प्रोग्राम किए जाते हैं, जिससे यह धीमा हो जाता है या पूरी तरह से क्रैश हो जाता है। DDoS हमले यूक्रेन के खिलाफ रूस की कई विनाशकारी साइबर गतिविधियों में से एक थे, साथ ही सरकारी और निजी संस्थाओं से संबंधित कंप्यूटर डेटा को मिटाने के लिए डिजाइन किए गए अन्य हमले भी थे।

सॉफ्टवेयर चोरी : बौद्धिक संपदा की चोरी का एक डिजिटल रूप जिसमें कॉपीराइट सामग्री, जैसे कि सॉफ्टवेयर, संगीत या फिल्मों का अनधि कृत उपयोग या वितरण शामिल है। सॉफ्टवेयर चोरी के उदाहरणों में बिना लाइसेंस के भुगतान किए गए सॉफ्टवेयर को सक्रिय करने के लिए कुंजी जनरेटर या क्रैक सॉफ्टवेयर का उपयोग करना शामिल है।

रैनसमवेयर : रैनसमवेयर में फाइलों को एन्क्रिप्ट करने के लिए दुर्भावनापूर्ण सॉफ्टवेयर का उपयोग करना शामिल है तथा उन्हें रिलीज करने के लिए भुगतान की मांग की जाती है। साइबर क़ानूनों का उद्देश्य रैनसमवेयर हमलों को अंजाम देने वाले व्यक्तियों को रोकना और उन पर मुकदमा चलाना है।

वितरित डायनायल-ऑफ-सर्विस (DDoS) **हमला :** इसका प्रयोग किसी ऑनलाइन सेवा को अनुपलब्ध बनाने और विभिन्न स्रोतों से वेबसाइट पर अत्यधिक पीसी के माध्यम से नेटवर्क को बाधित करने के लिए किया जाता है।

बॉटनेट : यह कंप्यूटर का एक ऐसा नेटवर्क है जिसे दूर बैठे हैकर्स द्वारा बाह्य रूप से नियंत्रित किया जाता है। रिमोट हैकर्स या तो स्पैम परिणाम हैं या इन बॉटनेट के माध्यम से अन्य कंप्यूटरों पर हमला करते हैं।

पहचान की चोरी (Identity Theft) **:** यह साइबर अपराध तब होता है जब कोई अपराधी किसी उपयोगकर्ता की व्यक्तिगत या गोपनीय जानकारी तक पहुँच कर लेता है, जिसके परिणामस्वरूप वह प्रतिष्ठा धूमिल करने या फिरौती, दुश्मनी की कोशिश करता है। डिजिटल संदर्भ में, पहचान की चोरी का मतलब धोखाधड़ी या दुर्भावनापूर्ण उद्देश्यों के लिए किसी के निजी डेटा को प्राप्त करना है। पहचान की चोरी की लक्षित संपत्तियों में सामाजिक सुरक्षा संख्या, जन्म तिथि, क्रेडिट कार्ड विवरण या ऑनलाइन खाते शामिल हैं। विशिष्ट प्रकारों में वित्तीय, चिकित्सा और कर पहचान की चोरीय सोशल मीडिया प्रतिरूपण और पहचान क्लोनिंग शामिल हैं जब कोई व्यक्ति अपनी पहचान छिपाने के लिए किसी दूसरे की पहचान का उपयोग करता है।

फिशिंग : यह एक प्रकार का सोशल इंजीनियरिंग अटैक है जिसका उपयोग अक्सर उपयोगकर्ता का डेटा चुराने के लिए किया जाता है जिसमें लॉगिन क्रेडेंशियल और क्रेडिट कार्ड नंबर शामिल होते हैं। ऐसा तब होता है जब कोई अपराधी किसी विश्वसनीय संस्था के रूप में किसी पीड़ित को ईमेल, त्वरित संदेश या टेक्स्ट संदेश के माध्यम से धोखा देता है जिसमें भ्रामक ईमेल, वेबसाइट घोटाले या पीड़ितों को उनकी व्यक्तिगत जानकारी और संवेदनशील डेटा

साझा करने या दुर्भावनापूर्ण डाउनलोड और वेबसाइटों के लिंक पर क्लिक करने के लिए गुमराह करने वाली संचार जैसी तकनीकें शामिल हैं। फिशिंग घोटालों के उदाहरणों में ऐसे ईमेल शामिल हैं जो घरेलू ब्रांडों, वित्तीय संस्थानों, सरकारी एजेंसियों या सोशल मीडिया साइटों से आते हैं।

हैकिंग : डेटा इकट्ठा करने, बदलने या नष्ट करने के लिए कंप्यूटर सिस्टम या नेटवर्क तक बिना अनुमति के पहुँचना हैकिंग माना जाता है। साइबर क़ानून ऐसी गतिविधियों को परिभाषित और दंडित करते हैं, जो डिजिटल सुरक्षा का उल्लंघन करने वालों के लिए क़ानूनी परिणाम सुनिश्चित करते हैं ।

ऑनलाइन उत्पीड़न : इसमें साइबरबुलिंग, साइबरस्टॉकिंग और किसी व्यक्ति विशेष को डराने, नुकसान पहुँचाने, गुस्सा दिलाने या शर्मिंदा करने के लिए बार-बार किए जाने वाले कार्य शामिल हैं। आजकल ऑनलाइन उत्पीड़न सोशल मीडिया साइट्स, डेटिंग ऐप्स और फोरम/मैसेज बोर्ड पर सबसे ज्यादा प्रचलित है। ऑनलाइन उत्पीड़न के उदाहरणों में अनुचित और अनचाहे संदेश भेजना, स्पष्ट और जानबूझकर धमकी देना या पीड़ित की संवेदनशील तस्वीरें या वीडियो वितरित करना शामिल है।

साइबर आतंकवाद : इंटरनेट या कंप्यूटर प्रौद्योगिकी का उपयोग करके आतंकवादी कृत्यों को अंजाम देने के लिए ऑनलाइन विनाश के आम तौर पर बड़े कार्य, जैसे कि बुनियादी ढाँचे को नुकसान पहुँचाना और भयावह खराबी पैदा करना, गोपनीय जानकारी चुराना, या राजनीतिक या सांस्कृतिक निहितार्थों के साथ प्रचार करना। साइबर आतंकवाद के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं, जिससे साइबर सुरक्षा और संरक्षण पर अधिक मांग बढ़ रही है।

पीयूपी (संभावित अवांछित प्रोग्राम) : साइबर विधि ऐसे सॉफ्टवेयर से संबंधित हैं जो कंप्यूटर या उसके उपयोगकर्ता को नुकसान पहुंचा सकते हैं, जिन्हें अक्सर उपयोगकर्ता की जानकारी के बिना इंस्टॉल किया जाता है। यह संभावित रूप से हानिकारक प्रोग्रामों के वितरण को नियंत्रित करने और उपयोगकर्ताओं की सुरक्षा करने में मदद करता है।

भारत में साइबर सुरक्षा से संबंधित चुनौतियाँ

लाभ-उन्मुख अवसंरचना की मानसिकता : उदारीकरण के बाद से सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी), बिजली और दूरसंचार क्षेत्र में निजी क्षेत्र द्वारा बहुत निवेश किया गया है।

ऑपरेटर पारदर्शी आधार ढाँचे में निवेश नहीं कर रहे हैं, बल्कि वे केवल सुरक्षात्मक आधार ढाँचे पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि साइबर हमले की तैयारियों पर निवेश से अच्छा पर्यवेक्षण नहीं हो सकता है।सभी ऑपरेटर लाभ पर अधिक केंद्रित हैं और अवसंरचना में निवेश नहीं करना चाहते क्योंकि उनके लिए लाभ के अवसर नहीं हैं।

साइबर हमलों की अंतर्राष्ट्रीय (पारंपरिक) प्रकृति : अधिकांश साइबर अपराध प्रकृति में ट्रांस-नेशनल होते हैं। विदेशी क्षेत्रों से गवाही एकत्र करना न केवल कठिन बल्कि एक धीमी प्रक्रिया भी है।

डिजिटल पवर्तंत्र का विस्तार : पिछले कुछ वर्षों में भारत ने अपनी विभिन्न आर्थिक परियोजनाओं के डिजिटलीकरण के मार्ग को आगे बढ़ाया है और इसने इस क्षेत्र में अपना अंतिम स्थान बनाया है। 5G और इंटरनेट जैसी नवीनतम प्रौद्योगिकियों से युक्त इंटरनेट से जुड़े कवरेज में वृद्धि। डिजिटलीकरण के आगमन के साथ उपभोक्ता एवं नागरिक डेटा को डिजिटल प्रारूप में एकीकृत किया जाएगा और ऑनलाइन माध्यम से लेन-देन किया जाएगा, जो भारत को हैकर्स तथा साइबर अपराधियों के लिए एक सक्षम आधार बना सकता है।

सीमित परिसंपत्तियाँ और प्राधिकार : धीरे-धीरे संबंधित अपराध की कम रिपोर्टिंग की जाती है क्योंकि ऐसे अपराध को हल करने की क्षमता सीमित रहती है। यद्यपि अधिकांश राज्य मानक साइबर लैब हार्ड डिस्क और मोबाइल फ़ोन का विश्लेषण करने में सक्षम हैं, फिर भी उन्हें केंद्र सरकार द्वारा 'इलेक्ट्रॉनिक साक्ष्य के परीक्षक' के रूप में मान्यता दी जानी अभी भी शेष है। जब तक उन्हें मान्यता प्राप्त नहीं होगी, वे इलेक्ट्रॉनिक डेटा पर विशेषज्ञ राय नहीं दे सकते।

भारत में साइबर अपराध से निपटने के लिए किये जाने वाले उपाय

साइबर सुरक्षा जागरूकता अभियान : विभिन्न स्तरों पर साइबर धोखाधड़ी के संबंध में बड़े पैमाने पर साइबर सुरक्षा जागरूकता अभियान चलाने, मजबूत, अद्वितीय पासवर्ड एवं सार्वजनिक वाई-फाई का उपयोग करने आदि में सावधानियों की आवश्यकता है।

साइबर बीमा पॉलिसियाँ : ऐसी साइबर बीमा पॉलिसियाँ विकसित की गई हैं जो विभिन्न सेवाओं और सेवाओं की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप हैं। यह सुनिश्चित करने में सहायता करने के लिए कि प्रतिभागियों के पास उनके सामने आने वाले सबसे प्रासंगिक साइबर सुरक्षा कवरेज है।साइबर बीमा साइबर घटनाओं से होने वाले नुकसान के खिलाफ वित्तीय कवरेज प्रदान करता है और इन घटनाओं के वित्तीय प्रभाव को कम करके संगठन अधिक तेजी से सुरक्षा के रूप में अपना संचालन जारी रख सकता है।

डेटा संरक्षण क़ानून : डेटा को नई मुद्रा कहा जाता है, क्योंकि भारत में एक सख्त डेटा सुरक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है।इस संदर्भ में यूरोपीय संघ का सामान्य डेटा संरक्षण पैटर्न और भारत का व्यक्तिगत डेटा संरक्षण पैटर्न, 2019, डिजिटल व्यक्तिगत डेटा सुरक्षा अधिनियम, 2023 (DPDPA) सही दिशा में उठाए गए कदम हैं।

सहयोगी त्वरित प्रतिक्रिया तंत्र : भारत जैसे देश में जहाँ नागरिक साइबर अपराध के प्रति संवेदनशील हैं, एक सहयोगी त्वरित प्रतिक्रिया तंत्र की आवश्यकता है। यह तंत्र सभी पक्षों को संगठित करेगा तथा क़ानून लागू करने वालों को त्वरित कार्रवाई करने तथा नागरिकों एवं संस्थाओं को तेजी से बढ़ते ख़तरे से बचाने में सक्षम बनाएगा। इस संदर्भ में भारतीय साइबर अपराध समन्वय केंद्र साइबर सुरक्षा जाँच को केंद्रीकृत करने, रिएक्शन डिवाइस के विकास को प्राथमिकता देने तथा इस ख़तरे को रोकने के लिए निजी कंपनियों को एक साथ लाने में सहायता करेगा।

साइबर विधि क्या है?

साइबर क़ानून साइबर स्पेस, इंटरनेट और कंप्यूटिंग के क़ानूनी पहलुओं से संबंधित है। व्यापक दृष्टिकोण से, साइबर क़ानून डिजिटल स्पेस में बौद्धिक संपदा, अनुबंध, अधिकार क्षेत्र, डेटा सुरक्षा क़ानून, गोपनीयता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मुद्दों को संभालता है। इंटरनेट पर होने वाली सभी घटनाओं और अपराधों को नियंत्रित करने के अलावा, साइबर क़ानून लोकप्रिय उपयोगों को मान्यता देता है, जिसमें ई-दस्तावेज शामिल हैं। पहले, अनुबंध, समझौते या क़ानूनी प्रकृति की कोई भी चीज कागज पर बनाई जाती थी। ई-दस्तावेजों और डिजिटल हस्ताक्षरों की मान्यता के साथ, दुनिया तेजी से कागज रहित भविष्य की ओर बढ़ रही है। चूँकि इससे कागज का उपयोग कम होता है और स्थिरता बढ़ती है, इसलिए इन प्रक्रियाओं को कई पर्यावरण उत्साही लोगों द्वारा व्यापक रूप से प्रोत्साहित किया जाता है।

सबसे पहला साइबर क़ानून कंप्यूटर धोखाधड़ी और दुरुपयोग अधिनियम (1986) था। वर्तमान में, दुनिया भर में कई साइबर क़ानून हैं, और दंड, सजा और नियम एक हद तक अलग-अलग हैं।

साइबर क़ानून की आवश्यकता क्यों है?

ऐसे कई कारण हैं जिनकी वजह से पारंपरिक क़ानून के लिए साइबर स्पेस के साथ काम करना मुश्किल है। पहला कारण यह है कि साइबर स्पेस एक अमूर्त आयाम है जिसे पारंपरिक क़ानून का उपयोग करके नियंत्रित और विनियमित करना असंभव है। दूसरा, साइबर स्पेस में अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के लिए पूरी तरह से अवहेलना की जाती है। दूसरा कारण यह है कि साइबर स्पेस हर सेकंड में बहुत अधिक ट्रैफिक संभालता है। जब हम यह पढ़ रहे होते हैं, तब भी अरबों ईमेल दुनिया भर में घूम रहे होते हैं, हर मिनट लाखों वेबसाइट एक्सेस की जा रही होती हैं और हर दिन बैंकों द्वारा दुनिया भर में अरबों डॉलर इलेक्ट्रॉनिक रूप से ट्रांसफर किए जाते हैं। साइबर स्पेस सभी के लिए साझा करने के लिए पूरी तरह से खुला है। साइबर स्पेस अपने सदस्यों को गोपनीयता की अपार संभावनाएँ प्रदान करता है। आसानी से उपलब्ध एन्क्रिप्शन सॉफ्टवेयर और स्टेग्नोग्राफिक उपकरण जो छवि और ध्वनि फाइलों के भीतर जानकारी को दोषरहित रूप से छिपाते हैं, साइबर-नागरिकों के बीच आदान-प्रदान की गई जानकारी की गोपनीयता सुनिश्चित करते हैं। इलेक्ट्रॉनिक जानकारी साइबर-अपराध का मुख्य उद्देश्य बन गई है। इसे अत्यधिक गतिशीलता माना जाता है, जो व्यक्तियों, वस्तुओं या अन्य सेवाओं की गतिशीलता से कहीं अधिक है। अंतर्राष्ट्रीय कंप्यूटर नेटवर्क सेकंड के भीतर दुनिया भर में भारी मात्रा में डेटा ट्रांसफर कर सकते हैं। करोड़ों रुपये का सॉफ्टवेयर सोर्स कोड या कोई फिल्म रिलीज होने के कुछ ही घंटों के भीतर दुनिया भर में पायरेटेड हो सकती है। किताबें, कागज, सीडी रोम, फ्लॉपी डिस्क जैसी भौतिक जानकारी की चोरी पारंपरिक दंड प्रावधानों के तहत आसानी से कवर की जाती है। फिर भी, मुश्किल तब शुरू होती है जब इलेक्ट्रॉनिक

रिकॉर्ड को जल्दी, अगोचर रूप से और अक्सर दूरसंचार सुविधाओं के माध्यम से कॉपी किया जाता है।

डिजिटल दुनिया में, अधिकांश क्षेत्र साइबर विधियों से प्रभावित हैं। शेयरों में लगभग सभी लेन-देन डीमैट फॉर्म में होते हैं। सभी कंपनियाँ अपने कंप्यूटर नेटवर्क पर व्यापक रूप से निर्भर हैं और अपने मूल्यवान डेटा को इलेक्ट्रॉनिक फॉर्म में रखती हैं। आयकर रिटर्न, कंपनी विधि के फॉर्म सहित सरकारी फॉर्म इलेक्ट्रॉनिक फॉर्म में भरे जाते हैं। उपभोक्ता खरीदारी के लिए क्रेडिट कार्ड का उपयोग करने लगे हैं। अधिकांश लोग संचार के लिए ईमेल, सेल फ़ोन और एसएमएस संदेशों का उपयोग कर रहे हैं। यहाँ तक कि ‘‘गैर-साइबर अपराध‘‘ मामलों में भी, महत्त्वपूर्ण सबूत कंप्यूटर/सेल में पाए जाते हैं। ऑनलाइन बैंकिंग धोखाधड़ी, ऑनलाइन शेयर ट्रेडिंग धोखाधड़ी, स्रोत कोड चोरी, क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी, कर चोरी, वायरस हमले, साइबर तोड़फोड़, फिशिंग हमले, ईमेल अपहरण, सेवा से इनकार, हैकिंग, पोर्नोग्राफी जैसे साइबर अपराध के मामले बहुत आम हैं। डिजिटल हस्ताक्षर और ई-अनुबंध ने व्यापार के लेन-देन के सामान्य तरीकों को फिर से स्थापित कर दिया है।

साइबर अपराध को नियंत्रित करने के लिए, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड को मान्य करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक हस्ताक्षरों का उपयोग किया जाता है। डिजिटल हस्ताक्षर इलेक्ट्रॉनिक हस्ताक्षरों का एक प्रकार है। डिजिटल हस्ताक्षर तीन प्रमुख क़ानूनी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं - हस्ताक्षरकर्ता प्रमाणीकरण, संदेश प्रमाणीकरण और संदेश अखंडता। डिजिटल हस्ताक्षरों की तकनीक और दक्षता उन्हें हाथ से लिखे हस्ताक्षरों की तुलना में अधिक विश्वसनीय बनाती है। बौद्धिक संपदा मानव मन की रचनाओं को संदर्भित करती है जैसे कि एक कहानी, एक गीत, एक पेंटिंग, एक डिजाइन आदि। साइबर स्पेस से संबंधित बौद्धिक संपदा के पहलू साइबर क़ानून द्वारा कवर किए जाते हैं। इनमें कंप्यूटर सॉफ्टवेयर, कंप्यूटर सोर्स कोड, वेबसाइट, सेल फ़ोन सामग्री, सॉफ्टवेयर और सोर्स कोड लाइसेंस के संबंध में कॉपीराइट क़ानून, डोमेन नाम, मेटा टैग, मिररिंग, फरेमिंग, लिंकिंग, सेमीकंडक्टर क़ानून जो सेमीकंडक्टर एकीकृत सर्किट डिजाइन और लेआउट की सुरक्षा से संबंधित है, कंप्यूटर हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर के संबंध में पेटेंट क़ानून शामिल हैं। डेटा सुरक्षा और गोपनीयता क़ानून व्यक्ति के गोपनीयता अधिकारों और बैंकों, अस्पतालों और ईमेल सेवा प्रदाताओं जैसे डेटा नियंत्रकों के हितों के बीच एक उचित संतुलन हासिल करने का इरादा रखते हैं। ये क़ानून नई प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके डेटा एकत्र करने, भंडारण और संचारण के कारण उत्पन्न गोपनीयता की चुनौतियों का समाधान करने का प्रयास करते हैं।

साइबर स्पेस के लिए विधि मनुष्य और मशीन को नियंत्रित करना है।साइबर विधि का मूल लक्ष्य मानव व्यवहार को वैध बनाना है, न कि प्रौद्योगिकी को। साइबर विधि प्रौद्योगिकी गहन विधि हैं, जो प्रौद्योगिकी के उपयोग की वकालत करते हैं, न कि उसके दुरुपयोग की।साइबर विधि में वे सभी मामले, विधि और विधिक प्रावधान शामिल हैं जो साइबर स्पेस में प्रवेश को

नियंत्रित करने वाले व्यक्तियों और संस्थानों को प्रभावित करते हैं, साइबर स्पेस तक पहुँच प्रदान करते हैं, हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर बनाते हैं जो लोगों को साइबर स्पेस तक पहुँचने या अपने स्वयं के उपकरणों का उपयोग करके 'ऑनलाइन' जाने और साइबर स्पेस में प्रवेश करने में सक्षम बनाते हैं। विधि में आचरण के नियम शामिल हैं जिन्हें सरकार द्वारा स्वीकार किया गया है, और जो एक निश्चित क्षेत्र में लागू हैं, और जिनका उस क्षेत्र के सभी लोगों द्वारा पालन किया जाना चाहिए। इन नियमों का उल्लंघन करने पर सरकार द्वारा कैद या जुर्माना या मुआवजा देने का आदेश जैसी कार्रवाई की जा सकती है। साइबर क़ानून में साइबर अपराध, इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल हस्ताक्षर, बौद्धिक संपदा और डेटा सुरक्षा और गोपनीयता से संबंधित विधि शामिल हैं।

हालाँकि इंटरनेट की किसी देश की भौगोलिक सीमा नहीं होती, लेकिन संयुक्त राष्ट्र की एक एजेंसी 'संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय व्यापार विधि आयोग' (UNCITRAL) ने सभी सदस्य देशों में विधियों की एक निश्चित स्तर की एकरूपता की सिफारिश की है। इसके लिए, दुनिया भर में साइबर अपराध को नियंत्रित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय व्यापार विधि आयोग (UNCITRAL) द्वारा इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स पर मॉडल विधि को अपनाया गया था।

साइबर विधि के अध्ययन के लिए नई धारा है और तेजी से बढ़ रही है। यह महत्त्वपूर्ण है कि उपयोगकर्ता को साइबर विधियों के बुनियादी निर्माण खंडों, अर्थात् नेटिजेंस, साइबर स्पेस और प्रौद्योगिकी के बारे में पता होना चाहिए।

नेटिजेंस : साइबर विधि ने नेटिजेंस की अवधारणा की शुरुआत की है। नेटिजेंस दुनिया भर में रहने वाला व्यक्ति है। वह वो है, जो नेट पर रहता है और इसे अपने दिन-प्रतिदिन के भौतिक संसार के विस्तार के रूप में उपयोग करता है। वह अपनी भौतिक दुनिया की गतिविधियों को ऑनलाइन माध्यम से दोहराता है, जैसे कि सामाजिककरण, खरीदना और बेचना। वह एक क्लिक से भौगोलिक स्थान और समय से परे चला जाता है। वह किसी भी मानव निर्मित या भौगोलिक सीमा की पहचान नहीं करता है। नेटिजेंस नामहीन, अनाम और चेहराहीन व्यक्ति हो सकता है, अगर वह चाहे और फिर भी विभिन्न इंटरनेट गतिविधियों में शामिल हो सकता है।

साइबर स्पेस : साइबर विधि साइबर स्पेस के लिए बनाए गई हैं। साइबर स्पेस में वे गतिविधियाँ शामिल होती हैं, जो साइबर स्पेस में प्रवेश करने से ठीक पहले भौतिक स्थान पर हुई हैं। साइबर स्पेस साइबर विधि का महत्त्वपूर्ण पहलू है जो मनुष्य और मशीन के बीच इंटरफेस को नियंत्रित करने के लिए भौतिक स्थान और साइबर स्पेस के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करता है। साइबर विधियों की उपस्थिति साइबर स्पेस में भौतिक विधियों का विस्तार है।

प्रौद्योगिकी : साइबर विधि इस्तेमाल की जाने वाली प्रौद्योगिकी के अनुसार बनाई जाती हैं। वे प्रौद्योगिकी और उसके अनुप्रयोगों के इर्द-गिर्द घूमते हैं। साइबर विधि साइबर स्पेस में स्वीकृत मानव व्यवहार के मानदंड स्थापित करते हैं। वर्तमान में, दो-प्रौद्योगिकी स्कूल हैं जिनमें

प्रौद्योगिकी विशिष्ट स्कूल और प्रौद्योगिकी तटस्थ स्कूल शामिल हैं। प्रौद्योगिकी विशिष्ट स्कूल का कहना है कि विधि को केवल एक दिए गए प्रौद्योगिकी या प्रौद्योगिकी मानक की पहचान करनी चाहिए। यानी, विधि अन्य मानकों को गैर-क़ानूनी, गैर-बाध्यकारी और इस प्रकार अनुमेय नहीं मानता है। यह स्कूल पूरे समुदाय के लिए एक एकल प्रौद्योगिकी मंच प्रदान करता है लेकिन यह तकनीकी नवाचारों की प्रक्रिया को बाधित करता है और एकाधिकार व्यवसाय बनाने में मदद करता है।

भारत में साइबर विधि : एक परिचय

भारत में हर साल कई साइबर अपराध होते हैं, जिनमें से 44,000 से ज्यादा मामले दर्ज किए जाते हैं। भारत के राज्यों में, साइबर अपराध दरों के मामले में कर्नाटक सबसे आगे है। स्टेटिस्टा की 2022 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में डेटा उल्लंघन की औसत लागत 2 मिलियन अमरीकी डॉलर थी। यह वित्तीय प्रभाव डेटा उल्लंघन की घटनाओं के परिणामों को दर्शाता है।

भारत में साइबर क़ानून दो प्रमुख क़ानूनों द्वारा शासित होता रहा हैः भारतीय दंड संहिता और सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000। ये क़ानूनी ढाँचे साइबर अपराध से निपटने और साइबर स्पेस में डिजिटल परिसंपत्तियों और व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा के लिए आवश्यक दिशानिर्देश और प्रावधान प्रदान करते हैं। लेकिन अब नई भारतीय न्याय संहिता 2023 में कई उभरते हुए अपराधों को संबोधित किया गया है, जिन्हें आईपीसी के तहत पर्याप्त रूप से कवर नहीं किया गया था। उदाहरण के लिए, साइबर अपराध पर काफी ध्यान दिया गया है। हैकिंग, पहचान की चोरी और ऑनलाइन उत्पीड़न जैसे अपराधों के लिए नई धाराएँ समर्पित की गई हैं। डिजिटल लेन-देन और इंटरनेट के उपयोग में तेजी से वृद्धि को देखते हुए, ये प्रावधान व्यक्तियों और व्यवसायों को साइबर ख़तरों से बचाने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

भारतीय साइबर क़ानून कई तरह के साइबर अपराधों को नियंत्रित करते हैं, जिनमें दो मुख्य पहलू शामिल हैं : सिस्टम को हैक करना और अलग-अलग परिमाण के अपराध करने के लिए उनका इस्तेमाल करना। इसके अतिरिक्त, भारतीय साइबर क़ानून में कई तरह के डोमेन शामिल हैं, जैसे बौद्धिक संपदा अधिकार और गोपनीयता अधिकार, आदि।

भारतीय स्थिति में, लोग एक प्रौद्योगिकी विशिष्ट नियम का पालन करते हैं। क़ानून (सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000) के तहत, निर्धारित असममित क्रिप्टोसिस्टम मानक का उपयोग करने वाले डिजिटल हस्ताक्षर क़ानूनी रूप से वैध माने जाते हैं। किसी अन्य मानक का उपयोग डिजिटल हस्ताक्षर अस्वीकार्य होगा। जब यह अधिनियम पेश किया गया था, तब प्रौद्योगिकी प्रक्रिया काफी कम थी, लेकिन समय के साथ भारत में प्रौद्योगिकी परिपक्वता बढ़ी है और नया सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) विधेयक, 2006 प्रौद्योगिकी तटस्थ नियम की ओर पलायन की वकालत करता है।

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा सुरक्षा अधिनियम, 2023 (DPDPA) : DPDPA डेटा संग्रह,

प्रसंस्करण, भंडारण और उपयोग को विनियमित करने पर ध्यान केंद्रित करता है, जबकि अभिभावक की अनुमति के माध्यम से नाबालिगों की सहमति प्राप्त करने पर जोर देते हुए गोपनीयता सुरक्षा उपायों को मजबूत करता है।

सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2021 : भारत ने 2021 में एक क़ानून पेश किया जिसे व्यापक रूप से मध्यस्थ नियम के रूप में जाना जाता है। ये नियम डिजिटल समाचार प्रदाताओं, ओवर-द-टॉप (OTT) प्लेटफॉर्म और सोशल मीडिया साइटों को नियंत्रित करने वाले क़ानूनों के लिए एक रूपरेखा तैयार करते हैं। इनमें डेटा सुरक्षा और शिकायतों से निपटने के प्रावधान भी शामिल हैं।

साइबर सुरक्षा से संबंधित उपाय

भारत ने साइबर ख़तरों, डेटा उल्लंघनों से निपटने और साइबर सुरक्षा लचीलापन में सुधार करने के लिए राष्ट्रीय साइबर समन्वय केंद्र (NCSC) और भारतीय कंप्यूटर आपातकालीन प्रतिक्रिया दल (CERT In) की स्थापना करके साइबर सुरक्षा में बड़ी प्रगति की है। आईटी अधिनियम कंपनियों और संगठनों को डेटा उल्लंघनों की सूचना देने के लिए 6 घंटे के भीतर CERT In को रिपोर्ट करने के लिए बाध्य करता है ताकि साइबर हमले की जाँच और प्रतिक्रिया की जा सके।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 का मुख्य उद्देश्य इलेक्ट्रॉनिक संचार के माध्यम से किए गए लेन-देन को विधिक मान्यता प्रदान करना है, जिसे 'इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स' कहा जाता है और इसमें संचार और सूचना के भंडारण के कागज आधारित तरीकों के विकल्प का उपयोग शामिल है, ताकि सरकारी एजेंसियों के साथ दस्तावेजों की इलेक्ट्रॉनिक फाइलिंग को सुविधाजनक बनाया जा सके। अधिनियम के उद्देश्य इसे सुविधा प्रदान करने वाला अधिनियम, सक्षम करने वाला अधिनियम और विनियमन करने वाला अधिनियम बनाते हैं। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 एक सुविधा प्रदान करने वाला अधिनियम है क्योंकि यह ई-कॉमर्स और ई-गवर्नेंस दोनों की अनुमति देता है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 को सक्षम करने वाला अधिनियम भी माना जाता है जो इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और डिजिटल हस्ताक्षरों की क़ानूनी प्रणाली की अनुमति देता है।

साइबर विधि का क्षेत्र : वर्तमान जटिल परिस्थिति और साइबर अपराध के बढ़ते प्रकोप के बीच साइबर क़ानूनों का व्यापक क्षेत्र है। ये विधि प्रौद्योगिकी घटक वाली अन्य विधियों के अन्य क्षेत्रों को भी अपने दायरे में लेती हैं। ई-कॉमर्स, ऑनलाइन अनुबंध, कॉपीराइट, ट्रेडमार्क, बिजनेस सॉफ्टवेयर पेटेंटिंग, ई-कराधान, ई-गवर्नेंस और साइबर अपराध से संबंधित क़ानून साइबर क़ानूनों के अर्थ और दायरे में आते हैं।

संक्षेप में, साइबर विधि किसी भी ऐसे व्यक्ति को दोषी ठहराने के लिए महत्त्वपूर्ण तंत्र प्रदान करती है, जिस पर किसी भी कंप्यूटर, कंप्यूटर सिस्टम या कंप्यूटर नेटवर्क का उपयोग

करके कोई अपराध करने या करने का वास्तविक संदेह है। साइबर विधि, विधियों का एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो इंटरनेट से जुड़े सभी विधिक मुद्दों का प्रतिनिधित्व करता है, और सॉफ्टवेयर पेटेंट, नेट बैंकिंग और अन्य से संबंधित क़ानूनी मामलों से निपटने के साथ-साथ इंटरनेट और साइबर स्पेस के सभी पहलुओं को नियंत्रित करता है। साइबर क़ानूनी प्रतिनिधि इंटरनेट पर व्यापक रूप से फैले प्रमुख साइबर अपराधों पर नियमित जाँच करते हैं। आज इंटरनेट के माध्यम से व्यक्तियों, संगठनों और सरकार के खिलाफ साइबर अपराधों में वृद्धि के साथ, वैश्विक समाज में सख्त साइबर विधियों की आवश्यकता है। साइबर अपराधों से लड़ने वाली साइबर विधि वर्तमान में लागू किसी भी अन्य क़ानून पर हावी होते हैं। भारत में, यह देखा गया कि साइबर अपराधों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है, इसलिए भारत में साइबर विधि का क्षेत्र बहुत अधिक मान्यता प्राप्त कर रहा है।

साइबर विधि का महत्त्व : साइबर क़ानून हमारे डिजिटल युग में सबसे महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह डिजिटल संपत्तियों की सुरक्षा करता है, साइबर अपराधों को रोकता है, ऑनलाइन गतिविधियों को नियंत्रित करता है, ई-कॉमर्स और उपभोक्ता अधिकारों की रक्षा करता है, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देता है, बौद्धिक संपदा अधिकारों को बनाए रखता है, डेटा गोपनीयता सुनिश्चित करता है और क़ानूनी उपाय प्रदान करता है। यह डिजिटल क्षेत्र में क़ानूनी व्यवस्था और सुरक्षा स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है एक-दूसरे से जुड़ी दुनिया में व्यक्तियों और संगठनों दोनों की रक्षा करता है।

साइबर क़ानून के लाभ

साइबर अपराधों से सुरक्षा : साइबर क़ानून क़ानूनी उपाय प्रदान करके तथा विभिन्न साइबर अपराधों के लिए दंड निर्धारित करके निवारक के रूप में कार्य करते हैं। यह सक्रिय दृष्टिकोण अवैध ऑनलाइन गतिविधियों पर अंकुश लगाने में मदद करता है तथा व्यक्तियों और व्यवसायों दोनों के लिए एक सुरक्षित डिजिटल वातावरण प्रदान करता है।

डाटा प्राइवेसी : व्यक्तियों की डिजिटल जानकारी की सुरक्षा साइबर क़ानूनों द्वारा संबोधित एक सर्वोपरि चिंता है। ये विनियम सुनिश्चित करते हैं कि संगठन व्यक्तिगत डेटा को जिम्मेदारी से संभालें, जिससे डिजिटल लेनदेन और बातचीत में विश्वास की नींव स्थापित हो।

ई-कॉमर्स विनियमन : साइबर क़ानूनों द्वारा प्रदान किया गया क़ानूनी ढाँचा ई-कॉमर्स के विनियमन के लिए महत्त्वपूर्ण है। यह ऑनलाइन लेनदेन, अनुबंधों और उपभोक्ता संरक्षण के लिए नियमों को परिभाषित करता है जिससे एक निष्पक्ष और सुरक्षित ऑनलाइन बाजार को बढ़ावा मिलता है।

बौद्धिक संपत्ति की सुरक्षा : साइबर क़ानून विशाल डिजिटल डोमेन में बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये क़ानून डिजिटल सामग्री के अनधिकृत उपयोग और वितरण को रोकते हैं, बौद्धिक श्रम के फलों की सुरक्षा करके नवाचार

और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करते हैं।

साइबर सुरक्षा मानक : साइबर क़ानून साइबर सुरक्षा मानकों की स्थापना में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। संगठनों को अपने नेटवर्क और सिस्टम की सुरक्षा के लिए उपाय लागू करने के लिए अनिवार्य बनाकर, ये क़ानून साइबर ख़तरों के उभरते परिदृश्य को संबोधित करते हैं।

भारत में साइबर अपराध से निपटने के लिए सरकार की पहल

भारतीय साइबर अपराध समन्वय केंद्र : यह केंद्र पूरे देश में सभी प्रकार के साइबर अपराध से निपटने का समन्वय करता है।

राष्ट्रीय साइबर फोरेंसिक प्रयोगशाला : यह ऑनलाइन तथा ऑफलाइन दोनों तरीकों से सभी राज्य/केंद्र शासित प्रदेश पुलिस के जाँच अधिकारियों को प्रारंभिक चरण की साइबर फोरेंसिक सहायता प्रदान करती है। साइट्रेन पोर्टल (CyTrain Portal): साइबर अपराध जाँच, फोरेंसिक और अभियोजन के महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर ऑनलाइन पाठ्यक्रमों के माध्यम से पुलिस अधिकारियों, न्यायिक अधिकारियों और अभियोजकों की क्षमता निर्माण के लिए एक विशाल ओपन ऑनलाइन पाठ्यक्रम (MOOC) मंच।

राष्ट्रीय साइबर अपराध रिपोर्टिंग पोर्टल : एक ऐसा मंच जहाँ सार्वजनिक साइबर अपराध की घटनाओं की रिपोर्ट की सकती है जिसमें महिलाओं एवं बच्चों के प्रति अपराध पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

नागरिक वित्तीय साइबर धोखाधड़ी रिपोर्टिंग और प्रबंधन प्रणाली : यह वित्तीय धोखाधड़ी की तत्काल रिपोर्टिंग और टोल-फ्री हेल्पलाइन के माध्यम से ऑनलाइन साइबर धोखाधड़ी दर्ज करने में सहायता के लिए एक प्रणाली है।

महिलाओं एवं बच्चों के प्रति साइबर अपराध निवारण (सीसीपीडब्ल्यूसी) योजना : साइबर अपराध की जाँच में क़ानून प्रवर्तन की क्षमता विकसित करने के लिए राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। संयुक्त साइबर समन्वय दलः राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों के क़ानून प्रवर्तन कार्यों के बीच, विशेष रूप से साइबर-अपराधों से संबंधित बहु-क्षेत्राधिकार वाले क्षेत्रों में समन्वय बढ़ाने के लिए इस दल का गठन करना।

पुलिस के आधुनिकीकरण के लिए केंद्रीय सहायता : आधुनिक हथियार, उन्नत संचार/फोरेंसिक उपकरण और साइबर पुलिसिंग उपकरण प्राप्त करने के लिए राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है।

सुरक्षा जागरूकता प्रशिक्षण : कई साइबर हमले मानवीय भूल के कारण होते हैं, जैसे दुर्भावनापूर्ण लिंक पर क्लिक करना या वायरस युक्त फाइलें डाउनलोड करना। सुरक्षा जागरूकता प्रशिक्षण का उद्देश्य उपयोगकर्ताओं को साइबर हमलों के ख़तरे को बेहतर ढंग से पहचानने, उनसे बचने और उन्हें कम करने के तरीके के बारे में शिक्षित करने में मदद करना है। प्रशिक्षण के सबसे आम रूप कंप्यूटर-आधारित जागरूकता प्रशिक्षण और फिशिंग सिम्युलेटेड अभ्यास हैं,

जहाँ कर्मचारियों को नकली फिशिंग ईमेल प्राप्त होते हैं ताकि यह जाँचा जा सके कि वे कैसे प्रतिक्रिया करते हैं। सुरक्षा जागरूकता प्रशिक्षण संगठनों को सुरक्षा के प्रति जागरूक बनाने में मदद करता है, जिससे साइबर हमलावरों से सुरक्षा के लिए अधिक लचीला नेटवर्क बनता है।

डेटा बैकअप और रिकवरी : साइबर हमलों के कई रूपों के परिणामस्वरूप महत्त्वपूर्ण डेटा हानि हो सकती है जिसका व्यक्तियों और संगठनों दोनों के लिए गंभीर वित्तीय और परिचालन परिणाम हो सकते हैं। डेटा बैकअप और रिकवरी समाधान डेटा की बैकअप प्रतियाँ बनाकर और रैनसमवेयर हमले, डेटा उल्लंघन या साइबर हमले के किसी अन्य रूप की स्थिति में तेजी से रिकवरी सुनिश्चित करके डेटा हानि से होने वाले नुकसान को कम करने में मदद कर सकते हैं। डेटा को नियमित रूप से संग्रहित करना एक आवश्यक सुरक्षा प्रोटोकॉल है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि आप किसी हमले की स्थिति में अपना डेटा पुनर्प्राप्त कर सकें।

एआई और एमएल साइबर अपराध सुरक्षा : अधिक उन्नत साइबर अपराध रोकथाम तकनीकें अब डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने, ख़तरों को ट्रैक करने और उनका पता लगाने, कमजोरियों को इंगित करने और उल्लंघनों का जवाब देने के लिए मशीन लर्निंग और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग करती हैं। उदाहरण के लिए, एमएल एल्गोरिदम धोखाधड़ी गतिविधि को इंगित करने वाले पैटर्न की पहचान करके और उन्हें समीक्षा के लिए चिह्नित करके वित्तीय लेनदेन में धोखाधड़ी का पता लगा सकते हैं और रोक सकते हैं। इसी तरह, एआई तकनीकें नेटवर्क ट्रैफिक का विश्लेषण करके, असामान्य पैटर्न की पहचान करके और वास्तविक समय में ख़तरों का जवाब देकर नेटवर्क और सिस्टम पर साइबर हमलों का पता लगा सकती हैं और उन्हें रोक सकती हैं।

निष्कर्ष

साइबर विधि डिजिटल दुनिया को आकार देने और उसकी देखरेख करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह लोगों और व्यवसायों को ऑनलाइन ख़तरों से बचाने से लेकर यह सुनिश्चित करने तक कि डिजिटल लेनदेन निजी और सुरक्षित हैं, कई मुद्दों से निपटती है। जैसे-जैसे तकनीक आगे बढ़ती जा रही है, साइबर विधियों को विकसित होने और नई चुनौतियों का सामना करने की जरूरत है, जिससे डिजिटल उपकरणों के जिम्मेदार और वैध उपयोग को बढ़ावा मिले।

साइबर विधियों के लाभ, जैसे ऑनलाइन अपराधों से सुरक्षा, डेटा गोपनीयता सुनिश्चित करना, ऑनलाइन व्यवसायों को विनियमित करना, बौद्धिक संपदा की रक्षा करना और साइबर सुरक्षा मानकों को निर्धारित करना, सभी एक सुरक्षित और नैतिक ऑनलाइन स्थान बनाने के लिए मिलकर काम करते हैं। साइबर विधियों द्वारा पहले से उठाए गए कदम हानिकारक गतिविधियों के खिलाफ निवारक के रूप में कार्य करते हैं, जिससे डिजिटल दुनिया में विश्वास का निर्माण होता है। कोरोना महामारी के बाद से भारत के डिजिटल बुनियादी ढाँचे में उल्लेखनीय

वृद्धि हुई है, जिससे अद्यतन और बेहतर साइबर सुरक्षा नियमों की मांग बढ़ गई है। हर हफ्ते, भारत में लोगों, व्यवसायों और संगठनों को लेकर कई साइबर सुरक्षा कार्यक्रम चिंता का विषय बन जाते हैं।

भारत सरकार ने तेजी से विकसित हो रहे डिजिटल परिवर्तन, पुराने साइबर सुरक्षा क़ानून और स्पष्ट, व्यापक डेटा सुरक्षा क़ानूनों की अनुपस्थिति के जवाब में साइबर सुरक्षा और अपराध को नियंत्रित करने के तरीके का पुनर्मूल्यांकन करना शुरू कर दिया है। 2024 में, देश के साइबर सुरक्षा ढाँचे को मजबूत करने के लिए नया क़ानून लागू किया गया। भारतीय न्याय संहिता 2023 में चोरी में डिजिटल वस्तुएँ भी शामिल की गई हैं। धारा 337 के तहत चोरी की परिभाषा में अब डेटा चोरी और पहचान की चोरी भी शामिल है।

भारत के लिए साइबर सुरक्षा क़ानून और विनियमन रिपोर्ट 2024 में डिजिटल परिदृश्यों की सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण विचारों पर प्रकाश डाला गया है। उभरते ख़तरों से अवगत रहने के लिए वर्तमान साइबर सुरक्षा रुझानों को समझना महत्त्वपूर्ण है। साइबर बीमा अपनाने से संभावित हैकिंग के खिलाफ वित्तीय सुरक्षा भी बढ़ सकती है। व्यवसाय और लोग शिक्षित होकर, मजबूत सुरक्षा उपाय अपनाकर तथा साइबर बीमा के बारे में सोचकर, तेजी से जुड़ती दुनिया में अपनी सुरक्षा में सुधार कर सकते हैं।

❑

संदर्भ

1. https://cybercrime.gov.in/1
2. https://cytrain.ncrb.gov.in/
3. https://cybercrime.gov.in/Webform/cyber_suspect.aspx
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Cybercrime
5. https://www.everycrsreport.com/reports/RL32114.html
6. https://infosecawareness.in/cyber-laws-of-india
7. https://www.lexisnexis.in/blogs/cyber-law-in-india/
8. "Cyber Law" by Dr. Pavan Duggal
9. https://www.geeksforgeeks.org/cyber-laws-in-india/
10. https://www.drishtiias.com/hindi/pdf/1586265907-cyber-crime-and-role-of-social-media.
11. https://www.meity.gov.in/content/cyber-laws

सन्तोष खन्ना

प्रोन्नति मानकों पर उड़ीसा उच्च न्यायालय का एक महत्त्वपूर्ण फैसला

उड़ीसा उच्च न्यायालय ने 25 जून, 2024 को केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल के एक सिपाही की सब इंस्पेक्टर पद पर नियुक्ति संबंधी चयन नियमों के बारे में एक फैसला दिया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में किसी कांस्टेबल की सब इंस्पेक्टर के पद पर नियुक्ति के लिए न केवल निर्धारित शैक्षिक योग्यता हो बल्कि उसे चिकित्सीय दृष्टि से अयोग्य नहीं होना चाहिए।

यदि इस मामले के तथ्यों पर गौर करेंगे तो पता चलेगा कि केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में एक सिपाही जिसकी वर्ष 2006 में केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में सिपाही के पद पर नियुक्ति हुई थी ने वर्ष 2014 में केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में सब इंस्पेक्टर के पद के लिए हुई सीमित विभागीय परीक्षा पास कर ली परंतु उसे मेडिकल रिव्यू बोर्ड ने उसे चिकित्सीय दृष्टि से अयोग्य पाया था क्योंकि उस सिपाही का एक अंडकोष विकसित नहीं हो पाया था। इसलिए उसे सब इंस्पेक्टर के पद पर नियुक्त नहीं किया गया था। उसने उस फैसले के विरुद्ध उड़ीसा उच्च न्यायालय में याचिका लगा कर गुहार लगाई कि जबकि वह केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में वर्ष 2008 मे सिपाही नियुक्त किया गया था और वर्ष 2014 में सब इंस्पेक्टर पद के लिए उसने सीमित विभागीय परीक्षा पास कर ली है, फिर भी उसे उस पद पर नियुक्त नहीं किया गया है।

दोनों पक्षों को सुनने के बाद उड़ीसा उच्च न्यायालय के एक-सदस्य खंडपीठ के न्यायाधीश न्यायमूर्ति संजीव कुमार पाणिग्रही ने कहा कि जो उम्मीदवार सभी शैक्षिक योग्यताएँ तथा चिकित्सा मानक पूरा करते हैं उन्हें ही सब इंस्पेक्टर के पद पर नियुक्त किया जा सकता है। दिल्ली उच्च न्यायालय के **प्रियंका बनाम भारत संघ** के मामले में भी यहीं कहा गया था कि सशस्त्र बलों में अपेक्षित मानदंडों को पूरा करने वाले उम्मीदवार को ही नियुक्त किया जा सकता है।

अपने फैसले में न्यायमूर्ति पाणीग्रही ने यह कहा कि 'इसलिये इस मामले में गैर-क़ानून के और मनमानी के जो आरोप लगाये गए हैं वह सही नहीं हैं। विभाग में वादी के विरुद्ध किसी की कोई निजी दुश्मनी नहीं है। विभाग ने तो बस चयन के नियमों के अनुसार सिपाही

का चिकित्सकीय परीक्षण करवाया था। उन्होंने यह भी कहा कि बेशक सिपाही वर्ष 2008 से केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल इं सिपाही नियुक्त किया गया था परंतु सब इंस्पेक्टर का पद अपैक्षाकृत उच्च पद हैं जिसमें योग्यता संबंधी कुछ मानक निर्धारित किए गए हैं जो केवल शैक्षिक योग्यता कै बारे में ही नहीं बल्कि चिकित्सीय मानक भी हैं जिन्हें पूरा करना जरूरी होता है। इस मामले में याची को चिकित्सकीय परीक्षण में अयोग्य पाया गया। अतः उसकी याचिका रद्द की जाती है।

❑

संदर्भ

1. W.P/ (C) संख्या 11392/2014
2. प्रियंका बनाम भारत संघ, दिल्ली उच्च न्यायालय
3. लिवलॉ.काम के सौजन्य से।

विधि भारती परिषद् के राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार के लिए पुस्तकें आमंत्रित।

विधि भारती परिषद् द्वारा वर्ष 2005 से विधि और न्याय के क्षेत्र में हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा हिंदी विधि लेखन को बढ़ावा देने के लिए हिंदी विधि पुस्तकों पर 'राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार' प्रदान किए जाते हैं। विधि पुस्तकों पर प्रथम पुरस्कार 7100/-, द्वितीय पुरस्कार 5100/-, तृतीय पुरस्कार 3100/- है।

वर्ष 2024 के राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार पिछले तीन वर्षों अर्थात् 2021, 2022 तथा 2023 में प्रकाशित विधि पुस्तकों पर दिया जाएगा। विधि भारती पुस्तक पुरस्कार का निर्णय एक तीन-सदस्यीय पुस्तक पुरस्कार निर्णायक मंडल द्वारा किया जाएगा जो अंतिम होगा। पुरस्कार विधि भारती परिषद् के एक भव्य समारोह में प्रदान किए जाएँगे

पुरस्कार हेतु पुस्तकें भेजने की विधि

राष्ट्रीय विधि भारती पुस्तक पुरस्कार के लिए विचारार्थ हिंदी विधि पुस्तक भेजने के इच्छुक लेखक पुस्तक की दो प्रतियों के साथ 500/- का बैंक ड्राफ्ट अथवा बैंक खाते में ऑन लाइन विधि भारती परिषद् के नाम से प्रेषित करें। लेखक पिछले तीन वर्ष में प्रकाशित एक से अधिक पुस्तकों के लिए प्रविष्ठियाँ भेज सकते हैं। पुरस्कार के विचारार्थ प्राप्त पुस्तकें किसी भी स्थिति में लौटाई नहीं जाएँगी।

विधि पुस्तकें भेजने की अंतिम तिथि 31 अक्टूबर, 2024 होगी।

पुस्तकें भेजने का पता :

विधि भारती परिषद्

बी.एच/48, (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088

मोबाइल : 9899651872, 9899651272 **ई-मेल :** vidhibharatiparishad@hotmail.com

सन्तोष खन्ना

यदि धर्म परिवर्तन प्रेक्टिस जारी रही तो भारत में बहुसंख्यक अल्पसंख्यक हो जाएँगे : इलाहाबाद उच्च न्यायालय

3 जुलाई, 2024 के बिजनेस स्टैंडर्ड में प्रकाशित समाचार के अनुसार इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने कहा है कि धर्म परिवर्तन की बढ़ती प्रवृत्तियों पर यदि रोक ना लगाई गई तो एक दिन भारत में बहुसंख्यक हिंदू अल्पसंख्यक बन जाएँगे। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति रोहित रंजन अग्रवाल ने कैलाश नाम के एक व्यक्ति की जमानत की अर्जी को ख़ारिज करते हुए यह कहा है। कैलाश पर एक गाँव में एकत्रित लोगों को ईसाई बनाने का आरोप लगाया गया है।

उसकी जमानत की अर्जी अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहा कि यदि इस तरह की प्रवृत्तियों पर रोक ना लगाई गई तो बहुसंख्यक हिंदू अल्पसंख्यक बन जाएँगे। इसलिए इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने ऐसे धार्मिक इकट्ठ पर तत्काल रोक लगाने के लिए कहा है जहाँ धर्म परिवर्तन की घटनाएँ घट रही हैं।

उन्होंने कहा कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 25 धर्म मानने और उसके प्रचार-प्रचार का अधिकार देता है किंतु इस संबंध में कुछ उचित प्रतिबंध भी हैं। न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि धर्म प्रचार का अर्थ अपने धर्म का प्रचार करना है ना के कुछ गरीब लोगों को गुमराह कर उन्हें ईसाई बनाना।

वास्तव में एक व्यक्ति रामकली प्रजापति ने शिकायत की थी कि कैलाश अपने मानसिक रोगी भाई का इलाज कराने दिल्ली गया था। वहाँ उसने सभी गाँववासियों को एकत्रित कर उनका धर्म परिवर्तन कर उन्हें ईसाई बना दिया। अपने भाई को ईसाई बनाते समय उसे कुछ रूपए पैसे भी दिए गए।

इस मामले में कैलाश की जमानत की अर्जी ख़ारिज करते हुए न्यायमूर्ति अग्रवाल ने कहा कि अभी अगर ऐसी गतिविधियों पर रोक ना लगाई गई तो एक दिन भारत में बहुसंख्यक हिंदू अल्पसंख्यक बन जाएँगे।

❑

डॉ. सुरेन्द्र असाटी

चमेली देवी इंस्टीट्यूट ऑफ लॉ, इंदौर में नवीन आपराधिक कानूनों पर कार्यशाला का आयोजन

दिनांक 28 जून, 2024 को प्रातः 11 बजे से चमेली देवी विधि संस्थान एवं अधिवक्ता परिषद मालवा प्रांत के संयुक्त तत्वावधान में नवीन आपराधिक क़ानूनों से संबंधित कार्यशाला का आयोजन किया गया, कार्यशाला का शुभारम्भ सरस्वती पूजन और वंदना से किया गया। कार्यशाला में मुख्य वक्ता के रूप में उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश माननीय न्यायमूर्ति श्री आई.एस. श्रीवास्तव एवं माननीय श्री वेद प्रकाश शर्मा ने नवीन आपराधिक क़ानून के प्रमुख परिवर्तनकारी प्रावधानों -- भारतीय न्याय संहिता, 2023, भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता, 2023 एवं भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 2023 को सरल तरीके से समझाते हुए नए क़ानूनों की परिभाषाएँ और उनके भावार्थ को समझाया।

माननीय जस्टिस शर्मा ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम 2023 के महत्त्वपूर्ण प्रावधानों के बारे में बताते हुए कहा कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम में बदलाव का उद्देश्य क़ानूनी प्रथाओं को आधुनिक तकनीकी प्रगति और सामाजिक परिवर्तनों के अनुरूप बनाना है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम नई परिभाषाएँ प्रस्तुत करता है, स्वीकार्य साक्ष्य के दायरे का विस्तार करता है और यह सुनिश्चित करता है कि क़ानूनी ढाँचा डिजिटल युग के साथ तालमेल बनाए रखे।

प्राचीन अंग्रेजी काल के क़ानूनों का पुरातन व्यवस्था से उपयोगी होना सही था, परंतु अब वर्तमान मे ये क़ानून प्रासंगिक नहीं है और समय में परिवर्तन के अनुसार क़ानूनों और विधि व्यवस्था और प्रक्रियाओं में भी परिवर्तन आवश्यक है। वर्तमान युग में तकनीक और ढाँचागत विकास, आर्थिक व सामाजिक विकास के कारण व्यापक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है और विधि और न्याय का क्षेत्रा भी अछूता नहीं रह सकता और जरूरी विधि परिवर्तन को लागू करना आवश्यक है।

नए क़ानूनों के पीछे मुख्य उद्देश्य आईपीसी, सीआरपीसी और भारतीय साक्ष्य अधिनियम में निहित औपनिवेशिक विरासत को हटाना है। ब्रिटिश शासन के दौरान स्थापित ये क़ानून अक्सर भारतीय समाज की जरूरतों के बजाय औपनिवेशिक हितों को दर्शाते थे। इन क़ानूनों को फिर से परिभाषित और अद्यतन करके, भारत एक ऐसा क़ानूनी ढाँचा बनाना चाहता है जो उसके लोकतांत्रिक मूल्यों और सांस्कृतिक संदर्भ के साथ अधिक अनुकूल हो।

माननीय जस्टिस श्रीवास्तव ने बताया कि क़ानून भी समाज की व्यवस्था को सुधारने और सुचारु रूप से संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आपने नवीन आपराधिक क़ानून से आए सुधारात्मक बदलाव से समाज में होने वाले महत्त्वपूर्ण असर को समझाया और विस्तार से

नवीन आपराधिक क़ानूनों के प्रभाव को विस्तारपूर्वक समझाया। आप ने आगे कहा, ‘‘भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता न्यायिक प्रक्रिया को तेज करने और आधुनिक बनाने के उद्देश्य से कई महत्त्वपूर्ण प्रक्रियात्मक परिवर्तन प्रस्तुत करती है। एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन अनुपस्थिति में मुकदमे की शुरूआत है, जिसका विस्तृत विवरण धारा 356 में दिया गया है, जो अदालत को अभियुक्त के अनुपस्थित होने पर भी मुकदमे को आगे बढ़ाने और समाप्त करने की अनुमति देता है, यह मानते हुए कि घोषित अपराधी ने उपस्थित होने के अपने अधिकार का त्याग कर दिया है। इसका उद्देश्य फरार प्रतिवादियों के कारण होने वाली देरी को रोकना है।” इन सुधारों का क़ानून प्रवर्तन और न्यायपालिका से लेकर आम जनता तक विभिन्न क्षेत्राों पर गहरा प्रभाव पड़ने की उम्मीद है। प्रक्रियाओं के डिजिटलीकरण, तलाशी और जब्ती में वीडियोग्राफी और फोरेंसिक विज्ञान एकीकरण जैसे उपायों को शुरू करके, नए क़ानूनों का उद्देश्य आपराधिक न्याय प्रणाली के भीतर पारदर्शिता, जवाबदेही और दक्षता को बढ़ाना है। आपने कहा यह हमारे लिए गर्व करने का समय है, अब हमारे पास अपनी बनाई विधियाँ है। मैकाले के पत्रा का जिक्र करते हुए कहा कि बृहद भारत में ईसाइ प्रभाव को स्थापित करना संभव नहीं है।

इस अवसर पर अधिवक्ता परिषद मालवा प्रांत के अध्यक्ष श्री उमेश जी यादव ने परिषद के कार्यों एवं अधिवक्ता कल्याण में इसकी सकारात्मक भूमिका के बारे में विस्तार से बताया। अधिवक्ता परिषद के सामाजिक कल्याण के कार्यक्रम के बारे में और न्याय की पहुंच सभी नागरिकों को सरल व सुगम हो, इस बात को भी सुनिश्चित करने के लिए बताया।

इस अवसर पर चमेली देवी ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूट (ब्क्ळप्) के समूह निदेशक डॉ. जॉय बनर्जी ने अपने संबोधन में ऐतिहासिक काल से लेकर वर्तमान तक अंग्रेजी क़ानून एवं विधि के क्षेत्रा में हुए नए उपयोगी परिवर्तनों को देश के सामाजिक सुधार एवं विकास के लिए आवश्यक बताया और उच्चतम न्यायालय के महत्त्वपूर्ण केस का उदाहरण देते हुए विधिक क्षेत्रा के विद्वानों व विधि विद्यार्थियों को क़ानून की बारीकियों से अवगत कराया। क़ानून की उपयोगिता उसके सही व प्रभावी क्रियान्वयन मे होती है यह भी समझाया।

अंत में चमेली देवी विधि संस्थान की प्राचार्य डॉ. निशा केवलिया ने कार्यशाला के सफल संचालन के लिए सभी अतिथि माननीय न्यायाधीशों, विधि विद्वानों, प्राचार्यों, अधिवक्ताओं, शैक्षणिक शिक्षकों, समस्त स्टाफ एवं विधि छात्राों का आभार व्यक्त किया और विधि एवं न्याय के क्षेत्रा में कार्यरत सभी न्यायधीशों, पुलिस अधिकारियों, विद्वानों, अधिकारियों, अधिवक्ताओं और नए अभ्यर्थियों को नये क़ानूनों के उचित और प्रभावी क्रियान्वयन हेतु शुभकामनाएँ प्रेषित की और सभी आम जनता तक न्याय की पहुंच हो, सभी को न्याय मिले, ऐसी कामना की। यह इस अवसर पर बड़ी संख्या में संस्थान के विधि अध्यनरत छात्रा-छात्राएँ, अधिवक्तागण, कॉलेज के प्रोफेसर, प्रशासनिक अधिकारी, और समस्त स्टॉफ के लोग उपस्थित थे।

यह कार्यशाला सभी विद्यार्थियों और विधिवेताओं, अधिवक्तागण, विधि के शैक्षणिक जगत से जुड़े हुए समस्त लोगों हेतु अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई और सफलतापूर्वक सम्पन्न हुई।

❑

Dr. Neema Qamar and Nasimuddin Khan

Loopholes in Intellectual Property Rights and the AI Technologies

Introduction

Property rights are a legal concept in personal liberty. Intangible property refers to property that cannot be physically touched, experienced, or perceived and includes intellectual property, securities, and the right to individual reputation. As a result of the industrial revolution and the fast advancement of science and technology, new rights and possessions such as patents, copyright, and industrial designs came to be recognized as 'intellectual property rights.' Literary and industrial property are examples of these rights. There are several judicial claims concerning the preservation of their intellectual property rights. As technology advances, new gaps in intellectual property rights emerge, one of which is the introduction of artificial intelligence and its use in the creation of intellectual property. This is a very new area of law and there is no law or legislation governing the legal status of AI.

Patents

These are grants given to people in order to safeguard their new innovation while also improving research and development throughout the world. There is a plethora of Artificial Intelligence technologies available to aid and assist at the Patent office, mostly at the World Intellectual Property Organization (WIPO):

1. 'Patent scope': Identifies comparable photos from the 'Grand Brand Database' while analyzing the work's uniqueness.
2. 'Automatic Patent Classification': The AI tool arranges the applications received at the IP offices into appropriate groupings and sub-groups.
3. The EPO uses an AI translation technology to translate patent publications from 32 languages into English, French, and German. Regardless, patent rights are not being enforced because numerous companies are altering or reproducing the functionalities of the copyrighted product and claiming it as a new version. For example, in 2014 case "*Limelight Networks v. Akamai Technologies*," Limelight followed the same approach as the Akamai firms in delivering content to the client's websites, with the

exception of the final stage, which is performed by one of the customers. The US Supreme Court ruled that Limelight is not responsible because of "split infringement." As a result of studying these types of examples, we may conclude that there is no technology to distinguish updated content. Before granting the license, AI technologies should be created to detect copies of patented products.

The biggest complaint leveled regarding Indian patent rights was in the field of medicine. Intermixing two or more drug formulations into 'one' can be seen, for example, Saridon, Asprin, and so on, which the government prohibits. However, the Indian Supreme Court in 2019 upheld the ban on Saridon, citing it as a "cultural treasure." Furthermore, certain Indian pharmaceutical companies have recently started selling counterfeit versions of pharmaceuticals imported from no-pharma patent nations such as Bangladesh, which violates TRIPs rules and patent rights and exposes people to hazards in the country. Thus, AI algorithms should be employed to locate changed medications during clinical trials.

Trademarks

This identifies a product's brand or a company's symbol that others cannot use, such as McDonald's golden arches or NBC's peacock emblem. These licenses were granted by the UK Intellectual Property Office (UK IPO), WIPO, and other organizations. The AI is making its impact in this industry, automatically assessing trademark applications, scanning the database for accurate images, trademark clearance, and registration. This could be useful for identifying the marks earlier rather than filing claims with the Trade Mark Office.

In some cases, a logo or brand can be counterfeited, but it can only be detected afterward. In the case of the Delhi High Court, where the defendant adopted the mark of BMW as 'DMW' for his E- Rickshaws, it was determined that because the plaintiff's markings and visuals equally resemble and potentially cause confusion, the defendant was held accountable. Despite the fact that this is considered precedent in other rulings, there are analogous examples that cannot be found, such as 'Swiggy,' which has a similar mark to 'google location' to some extent. In these instances, AI technologies are required to recognize the detailed alterations of logos or marks from patent applications.

Copyrights

Copyright refers to a person's right to work coming from his intellectual labor. This is solely to safeguard the owner's moral rights and integrity. This includes literary, musical, artistic, and architectural works, as well as sound recordings and cinematograph films. If the owner of the copyrights, to a particular work is violated, civil, criminal, and border enforcement remedies are available. Furthermore, various conventions and accords, such as the Berne Convention and TRIPs, guarantee these rights.

Despite these constraints on the protection of an individual's work, the system contains numerous flaws. In the case of the Library of Congress, for example, ownership rights were granted without a proper verification method, resulting in several copyright infringements. Instead of providing several remedies, if artificial intelligence techniques are used in copyright offices and private organizations to determine the originality of works, it would be far better to detect the plagiarized work or concepts expressed. Furthermore, using AI technologies to verify the tasks can help to avoid numerous flaws.

If plagiarism or originality of work is discovered, there will be no cases to file for copyright infringement. In these cases, courts may invoke exceptions found in the copyright rules of various jurisdictions. In which some may result in 'justice,' while others may not.

Fair use is one of the exceptions to copyright infringement specified in Section 107 of the US Copyright Act. This test is based on the purpose for which it can be used, the nature of the copyrighted work, the volume and substantiality of the copyrighted work, and the influence on the market value of the copyrighted work, as held in the case of 'Folsom vs. Marsh.' Furthermore, in the 2021 case of "Google LLC v. Oracle America, Inc.," the U.S. The Supreme Court ruled that "Google's usage of the Java APIs was within the four conditions of fair use" in the instance of copyright infringement, and that the matter should be reconsidered.

Fair dealing: It is yet another exception that is commonly employed in common law. The Supreme Court of Canada decided in this decision that "limited copying for educational purposes could potentially be permitted under the fair dealing exception." The 'Fair dealing' doctrine is applied as an exception even in Indian jurisdiction (Section 52(1)(a) and (b) of the Copyright Act, 1957). The Honorable Kerala High Court set three factors to assess if a work is an infringement of copyright: a. "the amount and value of the matter taken concerning the remarks or criticism"; b. "the purpose for which it is taken; and c. "the possibility of conflict between the two works." As a result, even if the cases are heard in court, there is a probability that the ruling will be in favor of the copyright infringers.

The plagiarism checkers used in the copyright office can only detect websites, blogs, published books, and so on, but not non-published books, and so on, which plagiarism checks cannot detect. Furthermore, this originality testing is not done on a global scale. As a result, some copyright violation may occur unwittingly. In this case, AI software that can keep track of all works on a global scale should be deployed.

If AI judges, such as those in Estonia, can automate court proceedings and improve speedy delivery methods, it may save courts valuable time. In this case, if there exist lawyer robots such as Wevorce, Fedor Neuronov, and others that can give legal advice, create memorandums, and so on. In this way, justice will be more accessible, and the courts will be able to focus on complex matters.

Furthermore, this can be employed in patent and trademark matters as well.

Conclusion

The use of AI in the IPR industry may aid in the automatic and speedy processing of data, allowing legal firms and the Intellectual Property Office to focus on more complex issues. Furthermore, by keeping consistent data sets throughout all IP offices, this AI can be utilized as a "unique identity." Furthermore, if AI systems notify the 'minute' facts while comparing massive data sets, it can save the unnecessary time taken in later phases, where claims occur at courts. However, there are several important issues: a. The AI capability that can be gained through training would be reliant on human knowledge, which is restricted. Data and algorithms are now limited in smaller organizations, but they can be improved with consistency and company. We can infer that AI can open up a new generation of intellectual property safeguards, lead to additional development stages in research and development without any replicas, and reduce legal claims in these sectors at the same time.

❑

लेखकों से निवेदन

सभी लेखक कृपया 'महिला विधि भारती' पत्रिका में अपने शोध आलेखों की पांडुलिपि तैयार करते समय शोध के सार, परिचय, कार्यप्रणाली, परिणाम, चर्चा और निष्कर्ष सहित मानक संरचना का पालन करते हुए उन्हें लिखें। शोध आलेख में संदर्भ अवश्य दें। शोध पत्र अनिवार्य रूप से मौलिक और अप्रकाशित हों और उन्हें यूनीकोड अथवा कृतिदेव फाण्ट में भेजें। शोध आलेख संबंधी किसी अन्य जिज्ञासा के बारे में प्रधान संपादक से निम्नलिखित मोबाइल पर संपर्क करें।

— प्रधान संपादक

मोबाइल : 9899651272

9899651872

Dr. Radhe Shyam Prasad

Protection of Private Property Against Arbitrary Acquisition : An Analysis

1. Introduction

The Hon'ble Supreme Court headed by Justice P.S. Narasimha and Aravind Kumar has recently formulated a path to do justice with the person whose property was acquired by the authority forcefully in the name of public purpose. The Supreme Court provided a constitutional test for land acquisition and provided guidelines that should be followed[1].The corporation has no power to acquire the private property of an individual for sake of public good. The Calcutta High Court, held that the Municipal Corporation cannot acquire the property unless the owner by himself voluntary agrees to do so, and the Municipal Corporation should follow the provisions of the Land Acquisition Act,1894.

As we know, the fundamental rights in the Constitution of India were borrowed from the Constitution of the USA in which at that time the Fifth Amendment in the USA Constitution had taken place. Through this amendment the clause "…no person shall be deprived of …property without due process of law; nor shall private property be taken for public purpose without just compensation.[2]" was added. Similarly, the Constitution makers of India incorporated the Right to property in the Part III of the Indian Constitution as a Fundamental right guaranteed under Article 19(1)(f) and Article 31. Article 19(1)(f) provides freedom to acquire, hold and dispose of the property and Article 31 provides that any person shall not be deprived of property except by authority of law and the State could acquire property only for public purposes by providing fair compensation to the person. After adoption of the Constitution, there were several systems prevalent like zamindari, ryotwari, mahalwari, etc., and to put an end on these systems and to protect the poor and landless people, the then Government enacted different laws like Zamindari Abolition Act, Land ceiling Act, etc.But due to conflict with several provisions of the enacted laws and the fundamental right to property, the purpose was not served[3]. From time to time, several amendments were made in the said right and finally in the year 1978, by the 44thConstitutional Amendment Act, Article 19(1)(f) and Article 31 were deleted from Part III and as a new Chapter IV in Part 12 containing Article 300A

was inserted. With this amendment, the right to property become a legal as well as a constitutional right. According to Article 300A, no person shall be deprived of his property save by authority of law. In Mukesh Kumar's Case,[4]it was held that the right to property is also a human right[5]. In this article, the guidelines to acquire the private property and authority of law as pronounced by the Hon'ble Apex court have been discussed.

2. CONCEPT OF PROPERTY AND ITS ACQUISITION

The term "property" in general sense means everything that can be corporeal or incorporeal, tangible or intangible, real or personal, and can be owned by a person or entity. In the legal sense, the term "property" is defined by various Acts and Statutes and divided into two heads viz., movable property and immovable property.Under Section 2(c) of the Benami Transactions (Prohibition) Act, 1988, property means any sort of property whether movable or immovable, tangible or intangible and includes any right or interest in such property. In the case of *The Commissioner, Hindu Religious Endowments, Madras v Sri LakshmindraThirthaSwamiar of Sri Shirur Mutt*[6]*,* Hon'ble Supreme Court opined that the word "property" as used in Article 19(1)(f) of the Constitution should be given a wide and liberal connotation and so that it should be extended to all types of property.[7] Thus, the property means every kind of property on which a person possesses its proprietary rights.

The State has this power to deprive a person from his property for the public purposes by the maxims '*Saluspopuliest suprema lex*' and '*necessita public major est quam*'. Both maxim means that the welfare of the public is the paramount law and public necessity is greater than the private necessity. The public interest has always been considered as an essential ingredient of public purpose.[8] This power of state is called eminent domain i.e. compulsory acquisition by State. The prerequisites of this power are the acquisition must by the law; acquisition done for the public necessity and just compensation must be paid to the person who is deprived from his property.The term used in Article 300A "save by authority of law" is the only restriction over the Right to property. Here, the term "law" includes every Act of Parliament or of State Legislature, a rule or statutory order having the force of law.[9] Thus a person cannot be deprived of his property merely by an executive fiat; there must be a law for depriving a person from his property[10].The Hon'ble Supreme Court in the case of ***West Bengal* v. *Mrs. Bela Banerjee & Ors,***[11] held that the compensation means the 'full compensation'which means the market value of the property at the time of acquisition.

3. PROCEDURAL ASPECT FOR FAIR AND JUST ACQUISITION OF THE PROPERTY

Recently, the Hon'ble Supreme Court has formulated a path to do justice with the person whose property was acquired by the authority forcefully in the name of public purpose. The Hon'ble Court has provided a constitutional test for

land acquisitionand gave a list that should be followed. The fact of case was that the property of Mr. Shah was acquired by the Kolkata Municipal Corporation in exercise of powers under Section 352 of the Kolkata Municipal Corporation Act,1980.[12]In year 2016, a writ petition was filed by Mr. Shah, for seeking an order to quash the alleged acquisition as illegal and to restore their name as owners in the official records. The Bench of Single Judge quashed the acquisition on the ground that the Corporation has no authority to acquire property under Section 352(a) of the Act as there is no provision of compulsory acquisition[13]. The appellant filed appeal before the division bench of the Calcutta High Court, where the bench reiterated the same and added that the Municipal Corporation does not acquire the property unless the owner by himself voluntary agrees to do so, and the Municipal Corporation should follow the provisions of the Land Acquisition Act,1894 for deciding the compensation[14].Again, the Municipal Corporation filed an appeal in the Supreme Court where the bench headed by Justice PS Narasimha and Justice Aravind Kumar held that they are satisfied with the opinion of High Court. Further, the Court said that "*it is true that after the 44th Constitutional Amendment, the right to property drifted from Part III to Part XII of the Constitution, there continues to be a potent safety net against arbitrary acquisitions, hasty decision-making, and unfair redressal mechanisms. Despite its spatial placement, Article 300A which declares that "no person shall be deprived of his property save by authority of law" has been characterized both as a constitutional and also a human right. To assume that constitutional protection gets constricted to the mandate of a fair compensation would be a disingenuous reading of the text and, shall we say, offensive to the egalitarian spirit of the Constitution.*[15]"

The Supreme Court interpreted "authority of law"and stated a list of seven principles that must be followed for acquisition of any private property. The seven principles are though not exhaustive, are as follows:

(i) Right to Notice : The right to notice means right to be known and it is the first and foremost principle of natural justice.According to this principle,an owner of a property has right to know about the intention of acquisition of his property by the State. This principle imposes a duty on the State to give prior notice to the owner of the private property about the intention to acquire his property. This principleis enshrined under Article 19(1)(a) of the constitution. The notice must be clear, cogent and meaningful.

According to Section 4 of the Land Acquisition Act,1894, whenever the Government needed any land for any public purposes, then a notification to that effect and in two daily newspapers circulating in the society and one shall be in local language shall be published. It is the duty of collector also that he should give the substance of the notice to the convenient places in the said locality. After the public notice, it shall be lawful for the officers to enter upon and survey the land but no person shall enter into any building or any enclosed garden, dwelling houses without giving at least seven days prior notice to the owner.Similarly, Section 11 of the Right to Fair Compensation and Transparency

in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013, also provide the provision relating to notice

Section 3(1) of the Requisitioning and Acquisition of the Immovable Property Act, 1952, the competent authority should give a notice in writing to the owner or the person who may be in possession of the property specifying the purpose of the requisition.

(ii) Right to Hearing : According to this principle, an owner has the right to raise objections regarding the acquisition of his private property and similarly the State must hear the objections of the owner concerned. The principle of natural justice states that every person must get a chance of being heard. Thus, this principle must be followed properly and should not be considered a mere formality.Section 5A of the Land Acquisition Act, 1894, provides that any person who received notice for acquisition, within 30 days of such notice, may raise objections to the acquisition. Similarly in Section 3 of the Requisitioning and Acquisition of the Immovable Property Act, 1952, the owner may raise objections against the acquisition within 15 days after receiving notice.

Section 15 of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013, has provided 60 days for raising objections by the interested person in any land.

(iii) Right to Reasoned Decision : After giving prior notice and hearing the owner of the property it becomes the duty of the State to take a reasoned decision and communicate the same to the person. This principle means that the State should provide the clearexplanation that was considered for making decision, to the owner of the property which is to be acquired.

Section 6 of the Land Acquisition Act, 1894, Section 3(2) of the Requisitioning and Acquisition of Immovable Property Act, 1952 and Section 19 of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013 provides that after giving notice and receiving objections, the competent authority make orders which it thinks necessary and expedient to do so.

(iv) Right to acquire only for Public Purposes : This is established under the Article 300A that a person has the right to property and he cannot be deprived of it without authority of law. The State being a welfare State, has the right to acquire private property for the public purposes. According to this principle, the State must demonstrate that the acquisition is made exclusively for public purpose to perform its duty of being a welfare State.

According to Section 2 (1) of the Land Acquisition Act, 2013, the ‘Public purposes’ means any work essential to the national security, defense or safety of the people, or for the strategic reasons pertaining to the navy, military, air force and armed forces of the state, including central paramilitary forces; or infrastructure projects like projects involving agro-processing,water harvesting etc.

Section 4 and 6 of the Land Acquisition Act, 1894 expressly provides that

the land must be acquired only for public purposes and the declaration relating to the acquisition of land serve as conclusive evidence. Sections 3(1) and 7(1) of the Requisitioning and Acquisitioning of Immovable Property Act, 1952 and Section 2(1), 11(1), 15(1)(b) and 19(1) of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation Act, 2013 provides that the acquisition must be for public purpose.

(v) Right to Fair Compensation and right of Restitution : As the right to property is a constitutional as well as a human right, thus it is the right of a person to hold and enjoy the property. It becomes the duty of State to not overlook the individual's right over the public right and thus the State should provide a fair and just compensation to the owner. The State should make all efforts to restore the similar position of the owner by giving monetary compensation or by providing rehabilitation.

Section 11 of the Land acquisition Act, 1894 deals with the award by the Collector, it provides that the compensation shall be made on the basis of the true area of the land, the compensation in his opinion should be allowed for the land and apportionment of the said compensation among all the interested persons. This compensation is allowed only with the previous approval of the appropriate government.Sections 8 and 9 of the Requisitioning and Acquisition of Immovable Property Act, 1952 deal with the principles and method of determining compensation and payment of compensation respectively. According to Section 23 of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013 also deals with the enquiry and land acquisition award by Collector.

(vi) Right to an efficient and expeditious process : The acquisition process involves many stages which makes it time-consuming. According to this principle, the State should conclude the whole process efficiently and within a reasonable time.

In the case *Mansaram* v.*S.P. Pathak* (1984), Hon'ble Supreme Court has held that the acquisition process must be finished within a reasonable time.

Sections 5A (1), 6, 11A, and 34 of the Land Acquisition Act, 1894, Sections 6(1A) and 9 of the Requisitioning and Acquisition of Immovable Property Act, 1952, and Sections 4(2), 7(4), 7(5), 11(5), 14, 15(1), 16(1), 19(2), 25, 38(1), 60(4), 64 and 80 of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013 specifies a prescribed procedure for the acquisition. For e.g.Section 5A (1) prescribe time for raising objection i.e. within 30 days after receiving notice.

(vii) Right of Conclusion : The Hon'ble Justice Narasimha laid down that "the culmination of an acquisition process is not in the payment of compensation, but also in taking over the actual physical possession of the land. If possession is not taken, acquisition is not complete." The process of Acquisition is complete when the possession, right, title and interest in the property is possessed by the State.

Section 16 of the Land Acquisition Act, 1894 deals with the power to take possession, the collector is empowered under this section to take possession after paying compensation.Section 4 and 5 of the Requisitioning and Acquisition of Immovable Property Act, 1952 deal with power to take possession of requisitioned property and rights over such property respectively. The competent authority may, by the notice in writing, order the owner or any other person who have possession of the property to deliver the property within thirty days of the service of the notice.Section 37 and 38 of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013 also deals with the similar provisions.

These procedural principles form an integral part of Article 300A of the Constitution. The Supreme Court held that the law provided under this provision should be in line with rule of law and should also be fair, just and reasonable.[16] These principles were adopted by the State and incorporated within the different statutes in different forms.

4. Conclusuion

The right to property is protected as a constitutional right and has even been interpreted to be a human right by the Apex Court of India. The Land Acquisition Act, 1894 has provided the right to the State to acquire any private property under certain conditions for the public good. This right to acquire private property of any individual cannot be enjoyed by the municipal corporation even though it is meant for public good.The State is also under obligation to fulfil the seven criteria as pronounced by the bench of Justices P.S. Narasimha and Aravind Kumar of the Supreme Court while making compulsory acquisition of the private property of an individual. A prior notice of acquisition of the private property should be given to the owner and the State should also hear the objection raised by such owner. The State should demonstrate that the acquisition is made exclusively for public purpose to perform its duty of being a welfare State and provide a fair and just compensation to the owner. There should be endeavor to make all efforts to restore the similar position of the owner by giving monetary compensation or by providing rehabilitation. The State should not follow the arbitrary procedure while acquiring the private property in order to safeguard the mandate of Article 300A of the Constitution. The procedure of acquisition is also guided by the Requisitioning and Acquisition of Immovable Property Act, 1952 and the Right to Fair Compensation and Transparency in Land, Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013.

❑

Refrences

1. Kolkata Municipal Corporation & anr. v. Bimalkumar Shah (W.P. No. 930 of 2016)

2. 5th Amendment in Constitution of USA, “No person shall be held to answer for a capital, or otherwise infamous crime, unless on a presentment or indictment of a Grand Jury, except in cases arising in the land or naval forces, or in the Militia, when in actual service in time of War or public danger; nor shall any person be subject for the same offence to be twice put in jeopardy of life or limb; nor shall be compelled in any criminal case to be a witness against himself, nor be deprived of life, liberty, or property, without due process of law; nor shall private property be taken for public use without just compensation.
3. Karwande, Bhupendra, “Concept of Right to Property in Indian Constitution,” 08 Mind and Society, 28(2019).
4. State of Haryana v Mukesh Kumar (2011)
5. Reiterated in Vimlaben Ajitbhai Patel v Vatslaben Ashokbhai Patel &ors. (2020).
6. 1954 AIR 282.
7. Available at https://indiankanoon.org/doc/1430396/ (Last visited on: 24/05/2024 at 1120 hrs.).
8. Chairman, Indore VikasPradhikaran v Pure Industrial coke & chemicals Ltd., AIR 2007 SC 2458.
9. Jilubhai Nanbhai Khachar v State of Gujrat, AIR 1995 SC 142.
10. M.P. Jain, Indian Constitutional Law,1348 (LexisNexis, New Delhi, 7th edn.,2014).
11. AIR 1954 SC 170.
12. Available at: https://cjp.org.in/supreme-court-lays-down-7-constitutional-tests-for-land-acquisition/#:~:text=Interpreting%20%E2%80%9Cauthority%20of%20law%E2%80%9D%20in,public%20purpose%2C%20fair%20compensation%2C%20efficient (last accessed on 10/06/2024 at 1100 hrs)
13. Kolkata Municipal Corporation & anr. v.Bimalkumar Shah (W.P. No. 930 of 2016).
14. Bimal Kumar Shah v. State of West Bengal & ors. (2018).
15. Id.
16. K.T. Plantation Pvt. Ltd. v. State of Karnataka (2011) 9 SCC 1.

Dr. Satyam Chansoriya

Evaluating Change : The Impact of New Criminal Laws on the Indian Legal System

"We do not think that the word substitution necessarily or always connotes two severable steps, that is to say, one of repeal and another of a fresh enactment even if it implies two steps. Indeed, the natural meaning of the word 'substitution' is to indicate that the process cannot be split up into two pieces like this. If the process described as substitution fails, it is totally ineffective so as to leave intact what was sought to be displaced. That seems to us to be the ordinary and natural meaning of the words 'shall be substituted".

Historical Development of Indian Criminal Law & Indian Judiciary

Pre-British Era : Medieval and Mohammedan Criminal Law : In medieval India, criminal law was predominantly influenced by the ruling powers. Following the establishment of Muslim rule, Mohammedan Criminal Law became prevalent. This system was significantly different from the legal traditions later introduced by the British.

The British Legal Influence

The British made substantial legal reforms during their rule. The Regulating Act of 1773 was a pivotal legislation under which a Supreme Court was established in Calcutta. Similar courts were later established in Madras and Bombay. These Supreme Courts were mandated to apply British procedural law when deciding cases involving the Crown's subjects.

Post-Rebellion Reforms and Codification

Following the 1st War of Independence of 1857, the British Crown took over the administration of India from the East India Company. In 1861, the British Parliament passed the Indian Penal Code. This codification marked a significant shift in the administration of criminal justice in India.

Drafting and Implementation of the Indian Penal Code

The Indian Penal Code (IPC) was drafted by the first Law Commission, chaired by Thomas Babington Macaulay. The drafting process began in 1834, and the draft was submitted to the Council of the Governor General of India in

1835. After undergoing numerous revisions and amendments, the IPC came into force on January 1, 1860.

Development of Criminal Procedure Code (CrPC)

The Criminal Procedure Code (CrPC) was first created in 1882. It was later amended in 1898 and again in 1973, following recommendations from the 41st Law Commission report. These amendments aimed to streamline and modernize the procedural aspects of criminal law in India.

The Indian Evidence Act, 1872

In 1870, James Stephen prepared a new bill containing 163 sections, which was different from the present Evidence Act. After recasting, the Indian Evidence Act, 1872, was passed. This act laid down the rules and guidelines for evidence in Indian courts, thus standardizing and formalizing the process of judicial proceedings.

Judiciary

India's judiciary is a single, unified, and integrated system, with the Supreme Court of India at its apex. The judiciary plays a crucial role in resolving disputes, interpreting laws, protecting fundamental rights, and acting as the guardian of the Constitution.

Ancient and Medieval Periods

Ancient India : Justice was deeply intertwined with religion and caste norms. Kings' courts dispensed justice based on 'dharma', reflecting eternal laws linked to individual duties (ashrama) and social status (varna).

Medieval India : The concept "King can do no wrong" was prevalent, with the king serving as the highest judge.

British Colonial Era

Mayor's Courts:

1661 : Under the Royal Charter, the Governorin Council of each Presidency, including Madras and Surat, was empowered to judge cases according to English law.

1687 : A charter authorized the establishment of a municipality in Madras, marking the beginning of the Company's territorial rule.

1726 : Mayor's Courts were established in Madras, Bombay, and Calcutta under a new charter. These courts were now under the King of England, not just the Company.

1753 : A new charter resolved previous issues, placing Mayor's Courts under the Governor in Council to avoid disputes.

Supreme Court of Calcutta

1773 : The Regulating Act established the Supreme Court of Fort William in Calcutta in 1774, consisting of a Chief Justice and three judges. It replaced the Mayor's Court of 1727 and had extensive civil, criminal, ecclesiastical, and admiralty jurisdiction.

Recorder's Courts:

1798 : Established in Madras and Bombay to handle increased judicial activity, these courts had similar powers to the Supreme Court of Calcutta.

1801 and 1824 : Supreme Courts were established in Madras and Bombay, respectively, with similar powers and functions as the Supreme Court at Calcutta.

Mofussil Adalats:

1765 : Warren Hastings established Mofussil Faujdari Adalat (criminal courts) and Mofussil Diwani Adalat (civil courts) in rural areas. Appeals could be made to Sadar Nizami Adalat (criminal appeals) and Sadar Diwani Adalat (civil appeals).

1787, 1790, 1793 : Lord Cornwallis reorganized the judicial system in Bengal, Bihar, and Orissa, creating a three tier judiciary system with Amin Courts, Diwani Adalats, and Sadar Diwani Adalat.

High Courts and Judicial Reforms

1861 : The Indian High Courts Act authorized the establishment of High Courts in Calcutta, Madras, and Bombay, merging the functions of Supreme Courts and Sadar Adalats. These courts had original, appellate, and extraordinary jurisdiction in civil and criminal cases.

Allahabad High Court: Established in 1875, followed by other High Courts in Patna (1912) and Lahore (1865).

Federal Court and Supreme Court

1935 : The Government of India Act established a Federal Court at Delhi with original, appellate, and advisory jurisdiction, serving as the immediate precursor to the Supreme Court of India.

1949 : The Constituent Assembly passed the Abolition of Privy Council Jurisdiction Act, establishing the Supreme Court of India at the top of the unitary judicial system.

Analyzing India's Legal Reform through New Legislations

The Indian Penal Code (IPC) came into force on January 1, 1860, making

it 163 years and 9 months old. The Indian Evidence Act, enacted in 1872, will be replaced by new laws starting on July 1, 2024. In administering these laws, we have faced many challenges. Therefore, the writer intends to critically examine whether these new acts effectively address those challenges.

Starting July 1st, 2024, the Bharatiya Nyay Sanhita (Indian Penal Code), Bharatiya Suraksha Sanhita (Code of Criminal Procedure), and Bharatiya Sakshya Adhiniyam (Indian Evidence Act) are set to replace the existing frameworks governing criminal law, criminal procedure, and evidence in India.

An in-depth analysis of the challenges within the Indian criminal justice system, particularly in **criminology, penology, and victimology**, along with an evaluation of how effectively these issues are addressed by the new acts, would offer valuable insights into their effectiveness and worthiness.

Chart 1

Criminology Challenges	**Penology Challenges**	**Victimology Challenges**
Judicial Backlog	Mental Health in Prisons	Rehabilitation &Reintegration
Corruption	Overcrowded Prisons	Offender-Oriented System
Impartial Investigation	Gang wars inside the prison	Inadequate Protection and Support
Forensic Infrastructure	Severe Staff Crunch	Limited Compensation and Reparation
Environmental Crimes	Neglect of Health and Hygiene	Stigma and Social Isolation
Gender Neutral Provisions	Colonial Nature and Obsolete	Laws Lack of Training for Law Enforcement
Police Brutality	Oversight and Accountability	Need for a Victim-Centric Approach
Environmental Crimes	Gangs operating from jails	Role of NGOs and Human Rights Organizations
Bail Issues	Remittance	Rehabilitation

Acknowledging that the above issues mentioned are not exhaustive but rather indicative of the broader difficulties encountered.

Below is a concise representation of the newly added provisions and omissions in the upcoming laws, presented in charts:

A comparative chart illustrating the major omissions and additions in IPC and BNS.

Chart 2

IPC Omissions **BNS Newly added Provisions**

Section 53 A- Construction of reference to transportation has been omitted in BNS

Definition under Section 2 (3) “Child”- means any person below the age of 18 years has been added in the BNS.

Section 377- Unnatural offences has been omitted in the BNS

Section 48 - Abetment outside India for offence in India has been added in the BNS.

Section 497- Adultery has been omitted in the BNS Section 69 Sexual intercourse by employing deceitful means, etc.

Section 309- Attempt to commit suicide has been omitted in the BNS Section 95 -

Hiring, employing or engaging a child to commit an offence has been added. in the BNS.
Section 310- Thug and Section 311- Punishment of Thug have been omitted in the BNS.
A new sub-section has been added for the punishment of murder under Section 103 sub-section (2).
Section 124 A- Sedition has been omitted in the BNS. Liability for registered medical practitioner has been added under Section 106 (1).
Section 153 AA- Punishment for knowingly carrying arms in any procession or organising or holding or taking part in any mass drill or mass training with arms has been deleted in the BNS.
Section 111 Organised Crime has been added in the BNS.

Additionally, previous chapters and sections have been renumbered, and the quantum of punishments and fines has been revised in the new acts.
A comparative chart illustrating the major omissions and additions in the CrPC and BNSS.

Chart 3

CRPC Omissions in BNSS BNSSNewly added Provisions

Sec 8 Metropolitan areas Sec 105 Recording of search and seizure through audio-video electronic means

Sec 10 Subordination of Assistant Sessions Judges Sec 107Attachment, forfeiture and restoration of property

Sec 16-19 provisions related to metropolitan magistrate Sec 112-113 Letter of request to competent authority for investigation in a country or place outside India

Sec 27Jurisdiction in the case of juveniles Sec 172 Persons bound to confirm to lawful directions of Police

Sec 153 Inspection of weights and measures

Sec 472 Mercy Petition in death sentence cases

❑

Refrences

1. State of Maharashtra vs. Central provinces Manganese Ore co. Ltd. (1977) 1 sc 643, Para 18
2. Indian Panel Code 1861
3. Criminal Procedure Code, 1882
4. Indian Evidence Act 18012
5. Bhartiya Nyay Samiti, 2023
6. Bhartiye Nyay Suraksha Sanhita, 2023

Dr. Prem Lata

Lawyers Not Liable Under Consumer Protection Act : Supreme Court of India

While National Commission had held in the matter of **D.K. Gandhi V M. Mathias** 2007 CTJ 909 (CP)NCDRC that services rendered by an advocate to his client in the course of litigation is to be covered under the provisions of Consumer Protection Act, bench comprising justice L.S Panta and Justce B Sudershan Reddy stayed the ruling of Apex Consumer Commission holding that lawyers rendered legal assistance and not service to the client.It is further stated that Bar Council can take care in case of default on the part of their fellow advocate.

This case had travelled from consumer forum to State Commission Delhi which had held on 10.3.2006 that advocates will not come within the ambit of consumer forums. Revision petition against this order was filed by the aggrieved consumer before the National commission which dealt with the matter in details referring to number of judgements on the issue of services rendered by professionals.

Cases Cited;

Indian Medical Association V V. Shantha 1995, CTJ 969 SC

Agreeing to the concept that profession of an advocate is a noble profession, reference to number of earliar cases against professionals were made. In the case of Indian Medical Association V V.Shantha 1995,CTJ 969 SC ,the word profession and occupation was discussed at length .In the matter of professional's, ability, it was agreed that success cannot be achieved in every case. Therefore, if a doctor, the medical professional is unable to cure the disease ,should not be considered deficient in services. But surely he renders services defined under the CP Act, though it is also a noble profession ,a life saver of a patient who banks upon the ability of a doctor for survival. In this case also, it was argued that medical associations are there to take disciplinary action against the erring professional .The similar argument is given in the case of M K Gandhi also.

Srimathi V Union of India AIR 1996 Mad 427

Incidentally this argument was earlier also discussed in the matter of Srimathi V Union OfIndia AIR 1996 Mad 427-That The Fact That Advocates Are Governed By The Statutary enactment and rules framed thereunder are subject to the disciplinary control of the statutary body But it was held that there is no provision to enable the Bar Council to deal with the dispute between the advocate and the client to compensate him for the damages and refund the money.

K Vishnu v National Consumer Dispute Redressal Commission (NC)2000

This National commission earlier also in the matter of K Vishnu v National Consumer Dispute Redressal Commission had observed in 2000 that even if the advocate is regarded as officer of the court and is a part of the justice system, he cannot be set free from his basic role of services to his client for the consideration received .

Mathew Jackob v State of Punjab 2005 CTJ 1085 SC

National commission while concluding his judgement had also referred to the case of Mathew Jackob v State of Punjab 2005 CTJ 1085 SC, where in Apex Court had held that in law of negligence, professionals, such as lawyers, doctors, architects and others are included in the category of persons professing some special skill and professional may be held liable for negligence.

Every profession is a noble profession if this could be the argument.

Inspite of a good reasoned order pronounced by National Commission after detailed discussion as above in the case of D K Gandhi v M Mathias, on the issue, large number of advocate bodies, bar of Indian lawyers, Delhi High Court Bar Association and Bar Council of India approached the Hon'ble SC and got the order stayed.

Should it be proper to exclude advocate absolving completely for their default in their duties because consumer court is held not available to the rescue to the consumer. We need to check with the concept with much care to deal with the subject. It is true that advocate is not a mere agent of his client but owes three fold duties unlike other profession – one to the public, another to the court and then to the client. It had been said in the case of *State of U.P. V U.P. State law officers by the SC as back as in 1994 that advocate is a part of justice* system and does not act as mouthpiece or agent of his client .Keeping in view the above duties of the advocate, one must see what duty the advocate has breached. If an advocate breaches the duty towards the public, should he be pardoned. If he commits such a mistake which is not in the interest of court, should he not be made answerable, he been considered as part of justice system.

Now the question is not limited to the services rendered to the client for the money charged .If he has been allotted a big size and honourable position and considered a part of justice system, then it becomes his duty to do everything to help the court and justice system. He might have to go out of the way also to catch the lacuna in the system and remove it. His not attending the court may not make him answerable to the client under Consumer Protection Act but cannot escape the duty of a court officer. If he plays fraud and indulges into unethical acts, his default to the court is much more than deficiency in services under this Act. Once the court has said no case of deficiency in services against advocate, it is for sure it is complete no to it. But it is a bigger responsibility of an advocate to shoulder with dignity and integrity and must show his honesty to the public as well as to the court who has given him a kingsize stature. Advocates need to re-look on their stature, admire it and preserve it.

❑

Refrences

1. D.K. Gandhi v M. Mathias, 2007 CTJ 909 (CP) NCDRC
2. Indian Madical Association v Shanta, 1995, CTJ 969 S.C.
3. Srimati Vs Unions of India AIR, 1996, Mad 427
4. K. Vishnu v. National Consumer Dispute Redressal Commission (HC), 2009
5. Mathew Jacob v State of Punjab, 2000
6. State of UP vs. State, 1994

घरेलू हिंसा अधिनियम और महिला सुरक्षा

केरल उच्च न्यायालय ने घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अंतर्गत दिए एक फैसले में कहा है कि यदि दोनों पक्षों के एक ही निवास स्थान पर रहने के आदेश के परिणामस्वरूप प्रतिवादी के अधिकार ख़त्म हो जाते हों तो उन्हें एक ही स्थान पर रहने के बजाय वैकल्पिक निवास स्थान के लिए आदेश दिया जा सकता है।